श्रीहरिः

प्रेमकान्ता सन्तति

या

(हीरे का तिलस्म)

तीसरा हिस्सा।

लेखक—

आशुकवि शम्भुप्रसाद उपाध्याय

" प्रेम बनमें प्रेम हैं, फूले फले प्रेमी बनो।
प्रेम मनमें लो, अमल रसके तुम्ही नेमी बनो ॥

प्रकाशक—

बाबू बनारसी प्रसाद खत्री
उपन्यास दर्पण आफिस, बनारस सिटी।

प्रथमबार १०००) १९२५ (मूल्य ॥≈)

प्रकाशक—

बाबू बनारसी प्रसाद खत्री।

उपन्यास दर्पण, बनारस सिटी।

मुद्रक—

मैनेजर-महेशप्रसाद,

सत्यनाम प्रेस, बनारस सिटी।

श्रीहरिः।

श्रीइष्ट देवता चरण कमलेभ्यो नमः।

प्रेमकान्ता सन्तति।

या

(हीरें का तिलस्म)

[तीसरा भाग]

पहिला बयान।

" फँसरहे हो ऐ मुसाफिर! सोचकर आगे बढ़ो।
धीर हो,गम्भीर हो,कुछ दिन मुसीबत से लड़ो॥?

दिन अनुमान तीन चार घण्टे के आचुका है;-हवा अभी से तेजी के साथ चल रही है। बार बार धूल के बादल उठकर एक भयानक दृश्य दिखा जाते हैं। जमीन लाल होकर तप रही है। निगाह उठाकर देखने से भी कहीं आसमान में चिड़ियों का नामो निशान दिखलाई नहीं पड़ता है। क्षण

क्षण में गरमी बढ़ती जाती है। हवा का झोंका लू को वहाता आता है। जीव मात्र का जी घबड़ा रहा है। किसी का जी कहीं निकलने को नहीं चाहता है। दिनकर की प्रखर किरणें संसार को भस्म करने के लिए उतावली बनी हुई मालूम पड़ती है। बसिया के पासही का एक मैदान इस समय गरम तवे की तरह तप रहा है। दूर २ पर कहीं कहीं एक दो पेड़ दिखाई पड़ते हैं परन्तु वे भी भरपूर छाया देकर किसी बैठने वाले को ठण्डक नही पहुँचा सकते हैं। ज्यादे के सामने थोड़ा कुछ भी नहीं कर सकता है। बढ़ती हुई गरमी में-वह छाया की शीतलता—जलती हुई आग में एक बूँद पानी की तरह मालूम पड़ती है। सामने बड़ी दूर पर काली लक़ीर सा पहाड़ का सिलसिला दिखाई पड़ता है। मैदान के बीचोबीच फटी हुई ज़मीन की तरह गहरा होकर एक नाला बह रहा है। उसके आस पास कहींकहीं छोटी मोटी कई एक गुञ्जान झाड़ियाँ दिखलाई पड़ रही हैं। नाले से कुछ दूर हटकर एक पुराना खण्डहर भी दिखाई देरहा है। उसके सामनेही पाँच सात बड़े बड़े पेड़ों की छाया के नीचे बना हुआ एक ऊँची जगत का कूँआ भी दिखलाई पड़रहा है। उसके नीचेहीसे सामने की तरफ जानेवाली एक कच्ची सड़क भी दिखलाई दे रही है, परन्तु इसी समय से इस पर चलनेवाले कोई भी दिखाई नहीं देते हैं। धूप की कड़ी मार संसार को अपार दुःख के धार में डुबो रही है। निगाह कहीं ठहरती नहीं है, ठहरती भी है तो तुरन्तही चौंधिया जाती है। ऐसे समय कुमार रणधीर सिंह को इसी कुएँ की जगत पर अकेले बैठे रूमाल से अपने मुँहका पसीना पोछते हुए देख रहे हैं। एक कसा-कसाया घोड़ा लम्बी बाग डोर के सहारे पेड़ से बँधा हुवा

अपने टापों से जमीन को खोद रहा है। पसीना पोछने के बाद कुमार ने खड़े होकर इधर उधर नजर दौड़ाया,—परन्तु उनकी अभिलाषा पूरी न हुई, वे निराश हो एक लम्बी सांस लेकर बैठ गए। आध घण्टा और बीता—तब भी कोई नहीं आया। उनका चित चञ्चल हो उठा—उनके मुख से एकाएक निकल पड़ा—ओफ! अभीतक वह नहीं आई,—क्या मुझे धोका तो नहीं दिया! मगर उसके ढंग से तो ऐसा नहीं मालूम पड़ता था। यदि उसको ऐसा करना होता तो क्यों मेरी सहायता करने को आती, तब फिर क्यों नहीं आई! कहीं—मेरे लिए वह किसी दुश्मन के हाथ में तो नहीं फँस गई। असम्भव है,—उसको जल्दी कोई नहीं फँसा सकता। मैं रात भर ही की सोहबतसे जान गया हूँ,बड़ी जबर्दस्त है, बड़ी चालाक है,—सांवली है तो क्या मगर खूबसूरत भी परले दर्जेकी है। यदि-गोरी होती तो मैं क्या तमाम दुनियां भी उसको निःसंकोच भावसे कुमारी सावित्री और कुमारी किरणशशी के बरोबर की कहते। उसका हँसना, उसका बोलना,—बहुतही अच्छा है। समझदार भी कम नहीं है। मगर अफसोस! अभीतक वह वहाँ से लौटकर नहीं आई, मुझे यहां आए दो घण्टे से कुछ ऊपर होगया परन्तु वह नहीं आई! उसने—दोनो कुमारियों को छुड़ालाने का वादा किया था,—वह जरूर ऐसा कर गुजरती मगर क्या बतावें-वह अभी तक नहीं ही आई। मैंने तो बहुत मना किया था,-परन्तु उसने तिलस्मी किताब लेआने के लिए कहा, इस लिए मुझे झख मारकर जाने देनाही पड़ा। अब मैं क्या करूँ, अकेले किधर जाऊँ। किस तरह उन दोनो को छुड़ाऊँ। हमारे आदमियों में से भी कोई नहीं मिलते हैं। मेरा पता

किसी को न लगा होगा। मगर उसके कहने सेतो सबको पता लग गया है। तब फिर क्यों नही मेरी खोज करते? अवश्य खोज करते होंगे—परन्तु मैंही नहीं मिल सका हूँ। जब से वीरपुर के लिए निकला तबसे आजतक एक न एक आफत में फँसताही गया। मुझे मिलनेकी कब फुरसत मिली, घरका समाचार भी ठीक २ मिल नहीं पाया है। क्या अब सब छोड़ छोड़कर घरही चला चलूँ। नहीं—हर्गिज नहीं, —अपने लिए मरने वाली अबलाओं को बिपत् के मुंह में छोड़ उनको उद्धार किए बिना घरकी तरफ लौट चलना पापही नहीं महापाप भी है। मुझसे ऐसा काम किसी हालत से भी नहीं हो सकता। वह अवश्य आवेगी; बिना आए किसी तरह से भी नहीं रहेगी। उसका वह सच्चा भाव मेरे दिलके अन्दर भर गया है। वह किसी हालत में भी झूठी नहीं हो सकती है। यदि न आई,—किसी तरह न भी आ सकी तो मैं अकेले-ही उन दोनो अबलाओं को दुश्मन के पञ्जे से छुड़ाने की कोशिश करूंगा। जान दूँगा,—मर मिटूँगा परन्तु इस कामसे कभी बाज न आऊँगा।

कुमार के मुंह से कुछ जोर पकड़ता हुवा यह अन्तिम बात निकल पड़ी, साथही उस खण्डहर के बगलही की एक छोटी मगर गुन्जान झाड़ी में से पत्ते केखड़बड़ानेकी आवाज आई। वे चौंक उठे, उन्होंने गौर के साथ देखा! इतने में छोटी २ डालियों को तोड़ता हुवा उस झाड़ी में से एक बहुत-ही भयानक सिंह एकाएक निकल जगत के पासही आकर खड़ा होगया। वह सिंह निहायतही भयानक था; गर्दन के सुनहले बाल जमीन के करीब करीब तक लटक कर हँवा के झोंके से इधर उधर उड़रहे थे। बालों का गुच्छा सिरपर

लगी हुई लम्बी पूँछ पीठके इधर उधर लहराकर अपनी मजबूती, जबर्दस्ती,—क्रूरता को एक साथही जाहिर कर रही थी। धीरे धीरे गले से निकलने वाली हल्की गुर्राहट जमीन को कँपारही थी। अगले दोनो पैर उछलने के ढंगपर जमे हुए थे। वैसे बहुतही भयानक और बड़ाही मजबूत जानवर को एकाएक अपने पासही आया हुवा देख एक मर्तबः तो पेड़ के साथ बँधा हुवा घोड़ा हिनहिनाकर उछल पड़ा,—मगर सैकड़ों बार शेर के शिकार में सवार के इशारे से कामयाबी हासिल कर मुकाबिले में डटाहुवा अच्छे नसलका दिलावर होने की वजह से दोनो कान खड़े कर उसीकी तरफ गौर से देखता हुवा हिम्मतकेसाथ रह गया। इधर भी इस समय बहादुर रणधीरसिंह की जगह पर यदि कोई दूसरा होता तो इस भयानक जानवर को देख शायद ही अपने दिल को कड़ा करके रहजाता मगर उन्होंने तो सैकड़ों सिंह को हर तरह से शिकार किया हुवा था, इसलिये उसको देखतेही अपने छितराए हुए दिलको बटोर तेजी के साथ उठ खड़े हो अपनी कमर से लटकती हुई तलवार को निकाल हाथ में लिया। कूएँ की जगत लगभग डेढ पुरसे के उपर थी। वह सिंह झाड़ी से बाहर निकलतेही घोड़े की हिनहिनाहट सुनते हुए भी—कुमारही की तरफ एकटक नजर गड़ाए हुए देखने लग गया था। वे भी खड़े होकर उसकी आंख में आंख मिलाए देखने लग गए थे। वह सिंह अब जोर जोर से दुम हिलाकर गुर्राने लगा। कुमार को अपने ऊपर हमला होने का निश्चय होगया। उन्होंने सँभल कर तरवार को और भी मजबूती के साथ पकड़ा। उनको ऐसा करते देख एकाएक उस जानवर ने अपना अत्यन्त

भयानक मुँह फाड़ कर जँभाई लेता हुवा जोर से दुम हिलाया। उनकी निगाह उसके खौफ नाक दांतोंपर जापड़ी, उन्होंने देखा उसके कई एक दांतों के बीच में एक जड़ाऊ सोने की चूड़ी अटकी हुई है। साथही उसकी लम्बी जबान भी ताजे खून से सनी हुई इधर उधर लपलपा रही है। यह देख उन्होंने किसी औरत को बेरहमी के साथ मारकर उसके आनेका खयालकिया,-इसलिए उनको उसके ऊपर निहायतही गुस्सा चढ़ आया। वे उसको दो टुकड़ा कर गिराने के लिए उतावले हो लाल लाल आंखें दिखाते हुए दो कदम आगे बढ़ आए।

इतने में जिस झाड़ी से निकल कर वह सिंह बाहर आया था उसी तरफ से अचानक किसी नाजुक औरत के बड़ेही कारुणिक शब्द से—हाय!-मैं मरी! कहकर कराहने की आवाज आई। उसको सुनतेही कुमार का कलेजा मोम की तरह पिघल गया,—उनकी आंखों में आंसू भर आया। वे अपने को एक पलके लिए भी सँभाल न सके;—बड़े जोर से कड़ककर—बेरहम खूनी! ठहर मैं तुझे इसका बदला दिए देता हूँ-कहकर जगत के नीचे उछल पड़े। वह भी यह आवाज सुन उनको उछलते देखकर गुस्से में आ झपट पड़ा। कुमार ने बड़ी फूर्ति के साथ भरजोर तरवार का एक हाथ उसकी गरदन पर मारा, मगर उनकी तरवार फौलाद के ऊपर लगी हुई सी हो झन्न से बोलती हुई कब्जे से उखड़ नीचे गिर पड़ी। सिंह बड़ी डरावनी आवाज से चिल्लाता हुवा उछल कर नाले की तरफ भागा चला गया। कुमार को इससे बड़ाही ताज्जुब हुवा। उन्होंने टूटी हुई तरवार को उठाकर देखा—कहीं खून का नामो निशान नहीं था। उन्होंने भागते हुए सिंहकी तरफ देखा,—वह तबतक नाली पारकर एक

झाड़ी के भीतर घुस रहा था। उनकी जिन्दगी में ऐसी बातें कभी हुई नहीं थी। वह क्षण भरके लिए अपने आपको भूल कर शिर झुकाए हुए कुछ सोचने लगे। इतने में फिर उस झाड़ी से—हाय! कोई पानी भी देने वाला नहीं है-कहने की वैसेही नाजुक आवाज आई, वे चौंक उठे, उनको उस बातका खयाल आया। उन्होने एक मर्तबः घोड़े की तरफ देखा, इसके बाद अपनी कमर से तमञ्चा ले तेजी के साथ वे उस झाड़ी के भीतर घुसे।

ज्योंही कुमार ने झाड़ी के अन्दर पैर रक्खा, उनकी निगाह कुछ दूर जमीन पर पड़ी हुई एक निहायतही खूबसूरत, कमसिन औरत की तड़पती हुई देहपर पड़ी। उसके चारो तरफ बहुत सा खून फैलकर जमीन को तराबोर किया हुवा था। बहुत से जड़ाऊ गहने इधर उधर बिखरे हुए थे। चिथड़े चिथड़े होकर फटी हुई एक नई रेशम की कामदार चद्दर एक ओर पड़ी हुई थी। टूटा हुवा खञ्जर एक तरफ पड़ा हुवा था। फटी हुई चोली से उसका गोरा वदन दिखलाई पड़ रहा था। आसमानी साड़ी की हालत बहुतही खराब हो रही थी। एक ओर कसाकसाया तत्कालही पेटका फाड़ागया हुवा घोड़ा लम्बी जबान निकाल अरटा चित पड़ा हुवा था। मसले हुए कलेजे के साथ वे उस सुन्दरी के पास जा, बहुतही रजीद हो कमल की तरह कुम्हलाए हुए उस सुन्दर चेहरे की तरफ हसरत भरी निगाहों से देखने लगे। उनको उसकी ऐसी हालत देख बहुत ही अफसोस हुवा। वे उसके पास बैठ-ईश्वर से उसको जीती रखने की प्रार्थना करने लगे। वह औरत बलाकी खूबसूरत थी,—उन्होने आजतक ऐसी नाजुक और खूबसूरत औरत कभी

नहीं देखा था। उसका मनमोहन चेहरा, उसका सांचे में ढला हुवा हाथ पांव, उसका कोमल बदन इस समय इस हालत में भी किसी के दिलको अपने वश में नहीं रहने देता था। वे एक क्षण के लिए सावित्री और किरणशशी को भी भूल गए। उन्होंने मनही मन कहा—विधाता! तुम्हारी कारीगरी की हद नहीं है। ऐसी खूबसूरत, मुलायम, नाजुक बदन औरत तो निगाह के सामने कभी आई ही नहीं थी। क्या तुमने ऐसी लामिसाल खूबसूरत नाज़नी को इसी तरह बे मौसिम ही में भयानक जानवर से घायल हो तड़प कर मरने के लिए बनाया था! इसके बाद उन्होंने उस सुन्दरी के नब्जपर हाथ धरकर देखा। वह बड़ी तेजी के साथ चलती हुई मालूम पड़ी। उसका तड़पना इस समय बन्द होगया था, वह बिलकूलही सुस्त हो चली थी। कुमार ने उसके हर एक बदन को टटोल कर देखा,—कहीं जरासा भी जख्म नहीं लगा पाया। उनको इस बात से एक तरह पर बहुतही खुशी हुई और कुछ ताज्जुब भी हुवा। वे सोचने लगे, इसको कहीं जख्म नहीं लगा है तो यह जमीन पर चारा तरफ फैला हुवा खून कहां से आया? उस हत्यारेने एक दूसरे की जान भी तो नहीं चबाडाली? अफसोस! मेरे हाथ से निकल कर वह चलाही गया,—अगर मैं उसको इस समय पाता?—क्या करूँ, गुस्से को पीकर रह जाना पड़ा? मगर उसके मुँह में वह सोने की चूड़ी कहां से आई? अवश्य इसके साथ कोई दूसरी साथी रही होगी। खैर—जो होना था सोतो होहीगया अब इसकी बेहोशी दूर करने का उपाय सोचना चाहिए। वे इन्हीं सब अनाप शनाप बातों को सोच रहे थे, इतने में उसने एक मर्तबः करवट फेर धीरे से—हाय? मैं बुरी मुसीबत में आफँसी,—जमना! तू कहां है? कहा।

कुमार के दिलमें जो बातें आई थी, वही ठीक उतरी। उन्होंने बड़ी सावधानी के साथ शीघ्रता से उसको उठाकर कूए की जगत पर ला लेटा दिया। इसके बाद अपनी कमर-बन्द को छोड़,कूए से पानी निकाल, उसके मुँह पर टपकाया। इस तरह पांच सात मिनट के उद्योगही से उस औरत ने आंख खोलदी और धीरे से कहा—मैं कहा हूँ! मेरी प्यारी सखी जमना कहां है?

कुमार—जरा तुम्हारी तबीअत दुरुस्त हो जाय तो मैं सब कुछ बता दूँगा। अभी आध घण्टे तक चुपचाप पड़ी रहो?

औरत—(उठकर बैठती हुई) नहीं, अब मेरी तबीअत दुरुस्त है। मैं चुपचाप बैठी रह न सकूंगी।

कुमार—(कुछ उदास होकर) यह तो तुम बड़ी जल्दी कर रही हो?

औरत--(अपने बदन की तरफ देखकर) मैं आज बड़ीही बुरी सायत से चली रही। खैर कुछ परवाह नहीं,जिस तरह भगवान ने मुझे सँभाला उसी तरह उसको भी बचावेंगे। हां, यह तो बताइए,मुझे आप ने किस अवस्था में पाया? मैं कब तक बेहोश पड़ी रही? इसके जवाब में कुमार कुछ कहाही चाहते थे इतने में इधर उधर से कई एक सवारों ने आकर घेर लिया। उन लोगों को देखतेही उस औरत ने कहा—देखिए, सँभल जाइए,-यह सब मेरे दुश्मन मेरे सिरपर आ पहूँचे? यह सुनतेही कुमार जल्दी से तलवार खींच उठ खड़े हुए।

दूसरा बयान

" सोचते क्या थे, हुवा क्या, क्या अभी होगा यहाँ।
हाथ धो पीछे पड़ा है दुःख. अब जाऊँ कहाँ ? ॥ ? "

कुमार महेन्द्रसिंह की आंखें खुलतेही—उन्होने देखा—वे एक निहायतही सजेसजाए कमरे में गुदगुदेदार पलङ्ग के ऊपर पड़े हुए हैं। शिरमें कुछ कुछ दर्दसा मालूम पड़ रहा है। उन्हो ने इधर उधर निगाह उठाकर देखा,—परन्तु अपने अलावे किसी दूसरे को नहीं पाया, उन्हे रातकी बात का ख्याल हो आया। वे सोचने लगे—यह कौनसी जगह है, मैं कहां से कहां चलाआया, इस मकान का मालिक कौन है ? मुझे यहां कौन उठा लाया ? मैं आज कई दिनों से कैसे फेर में पड़ता हुवा आ रहा हूँ, इसके आगे अब क्या होगा, क्या होने वाला है,—किस तरह मैं इन सब भूल-भूलैयों से छुटकारा पाऊँगा,—वह सब मैं अपने दिमाग से इस समय कुछ भी नहीं सोच सकता। परन्तु नहीं, मैं क्यों इस तरह तरद्दुद में फँसा हुवा अपने को खप्त कर रहा हूँ। देखूँ—उठकर एक मर्तबः इधर उधर देखूँ,—किसी की सूरत

दिखलाइ पड़े तो उससे पूछूँ । फिर उसके बाद,—जैसा कुछ आ पड़ेगा वैसा किया जायगा। यह सब सोचते सोचते कुमार उठ बैठे। इतनेही में सामने का दरवाजा खोलकर एक अठार उन्नीस बरस की निहायतही हसीन औरत,—बड़ी मस्तानी चाल से,— अपने पावजेबकी मधुर ध्वनि निकालती हुई उनके पासही आ खड़ी हुई। उन्होने आजतक ऐसी खूबसूरत औरत को कभी नहीं देखारहा । वे सकते की हालत में हो टकटकी बांधकर उसकी तरफ देखने लगे। उसने इनकी यह हालत देख, मुस्कुरा कर बड़े नखरे के साथ कहा—अब आपकी तबीयत कैसी है ? कुमार चौंक उठे,—उन्हे अब जाकर होश हुवा,—अपनी हालत पर शर्मिन्दः होते हुए कहने लगे और सबतो दुरुस्त है परन्तु शिर में कुछ दर्द सा मालूम पड़ रहा है।

औरत—मैं इस दर्द को इसी दम दूर किए देती हूँ। आप उठ बैठे क्यों, लेट जाइए ? मैं आपके लिए अभी दवा लिए आती हूँ ?

कुमार—नहीं नहीं, आप मेरे लिए इतना कष्ट न उठाइए, मेरा दर्द धीरे धीरे कम होता जा रहा है ! आप खड़ी क्यों हैं, बैठ जाइए।

औरत—यह तो आपने अच्छा कहा । मैं आपको सब तरह से आराम किए बिना कहीं बैठ सकती हूँ ? देखिए,— आज आप पूरे एक हफ्ते के बाद होश मे आए हुए हैं। अज्ञान ऐयारों के हाथ की बेहोशी ऐसीही होती है।

कुमार-(ताज्जुब में आकर) क्या मैं एक हफ्ते के बाद आजही होश में आया हूँ ?

औरत—जी हां,—इस एक हफ्ते के भीतर मैंने कई

तरहकी दवाइयां दी परन्तु कुछ नहीं हो सका । आखिर आज एक बूटि से आप की बेहोशी दूर हुई। अब मैं फिर उसी को लाकर आपको पिलाती हूँ।

कुमार—तो क्या आपके यहां कोई लौंडी नहीं है।

औरत—हैं क्यों नहीं मगर आपके लिए तो मैं खुद लौंडी मौजूद हूँ। मेरे रहते हुए और कौन इस अहोभाग्य के कामको अपने हाथ में ले सकता है। इतना कहकर वह तेजी के साथ बाहर निकली,-कुमार उसकी खूबसूरती; उसके मधुर भाषण पर मोहित हो तरह तरह की बातें सोचने लगे। पांच मिनट के बाद वह औरत फिर आई । अबकी उसके हाथ में अंगूर से भरी हुई सोने की एक रिकावी थी। उसने आतेही कुमार को उनमें से कई एक अंगूर निकाल खानेके लिए दिया। वे उसको बड़े प्रेम से खाने लगे। वह औरत तब तक खड़ी हो उनके चेहरे की ओर देखती रही। इसके बाद उस रिकावी को एक टेबुल के ऊपर रख, उनके पास आकर कहने लगी—अबतो कुछ दर्द मालूम न पड़ता होगा ?

कुमार—(शरपर हाथ फेरकर) हां, अबतो कुछभी दर्द मालूम नहीं पड़ता है। यह अंगूर नहीं अमृत है। तिसपर…

औरत—(हँसकर) हां हां कहिए, कहते कहते आप क्यों रुक गए ?

कुमार—आप एक कुर्सी को खींचकर मेरे सामने बैठ जाइए तब मैं कहूँगा।

औरत—(हँसकर) यह बात है,—कोई हर्जा नहीं । (एक कुर्सी को खींच उसपर बैठ कर) हां अब बताइए ? तिसपर के साथ कौन कौनसी बातें सम्बन्ध रखती हैं ?

कुमार—सबसे पहले यह बाताइए की यह कौनसीजगह

है! मैं किसके मकान में हूँ? आपकौन हैं? यहाँ मुझे कौन उठा लाया? मेरे साथ ऐसा अच्छा सलूक किस लिए किया गया? मुझे बेहोश करने वाले कौन थे?

औरत—यहतो आपने एक साथही पचासों सवाल करके मुझे किसी का भी जवाब देनेके लायक न रक्खा। मैं सबसे पहले किस बात का जवाब दूँ?

कुमार—(हँसकर) आप सिलसिलेवार जवाब देती जाइए?

औरत—अच्छी बात है, आप पहले मुझे आपआप कहना छोड़ दीजिए तो मैं एक एक करके सब बातों का जवाब दूँ।

कुमार—यह तो विना आपको अच्छी तरह से जाने आप कहना किसी तरह से भी नहीं छोड़ सकता?

औरत—तब फिर मैं कुछ जवाब भी नहीं दे सकती।

कुमार—(हँसकर) इस खींचाखींची से फायदा हीक्या निकलता है।

औरत—फायदा! फायदा न होता तो मैं क्यों आप से जिद कर बैठती।

कुमार—तो फिर आप भी मुझे आप कहना छोड़दीजिए।

औरत—यह तो मेरी जानरहते कभी होही नहीं सकता।

कुमार—आपतो अपनी बातों पर अड़ी रहै, और मुझे मजबूर करके अपनी बातें बदलने के लिए कहैं, । यह कैसी जबर्दस्ती है।

औरत—जबर्दस्ती न करती तो आपको मैं एक जबर्दस्त दुश्मन के हाथ से कैसे छुड़ाकर लाने पाती?

कुमार—खैर मैं हारा,—मैं अब कभी तुम्हे आप न कहूँगा। जिसको जिस बातसे चिढ़ है, जो जिस बातको न

सुनने की कसम खा बैठा है। उसको उस बातके सुनाने में अपने को क्यों जोर दें। अच्छा अब मेरी बातोंका जवाब दो?

औरत—(प्रसन्न होकर) सबसे पहले मैं किस बातका जवाब दूँ?

कुमार—(हँसकर) तुम, बड़ीही मसखरी मालूम पड़ती हो। खैर—जो तुम्हारे जी में आवे उसका जवाब पहले दो। इसके जवाब में वह और कुछ कहाही चाहती थी इतने में एक बीस बाइस बरस की खूबसूरत औरत ने घबड़ाई हुई सूरत में उस औरत के पास आकर कहा—आपको महाराजा साहब इसी वक्त याद कर रहे हैं?

औरत—(चौंककर) एँ, महाराजा साहब! महाराजा साहब शिकार से कब लौट आए?

वह—उन्हे लौटे पांच मिनट भी न हुई होगी। उन्होंने आतेही सबसे पहले आपही को याद किया है।

औरत-अफसोस! भैरवी के वक्त श्याम कल्याण छेड़ा गया। वे भी कैसे बेढब समय में आगए? खैर कोइ परवाह नहीं,—(कुमार की तरफ देखकर) आप बे फिक्र होकर रहिएगा। मैं घण्टे भरके भीतर ही चली आऊँगी। तब तक यह मेरी प्यारी लौंडी ज्योती आप की सेवा करती रहेगी। इतना कहकर वह तेजी के साथ उठ,—बाहर चली गई। उसके जाने के बाद कुमार कुछ देर तक अपने खयाल में डूबे रहे। उन्हे ज्योती के रहने की भी याद न रही। उनकी ऐसी हालत देख ज्योती ने कहा—कुमार! आप मेरी एक बातको जरा ध्यान देकर सुनेंगे?

कुमार—कहो, क्या कहा चाहती हो?

ज्योती—मैं इस फ़ाहिशा की लौंडी ज्योती नहीं हूँ।

कुमार—(चौंककर) तब तुम कौन हो ?

ज्योती—मैं आपकी दासी कालिन्दी हूँ।

कुमार—(खुश होकर] तुम कालिन्दी हो ? तो फिर यहाँ कैसे आपहूँची, तुम अकेलीही हो या तुम्हारे साथ और भी कोइ हैं ? यह सरजमीन कहां की है। यह औरत कौन है ?

कालिन्दी—मैं अकेली नहीं हूँ। मेरे साथ भैय्याभी हैं। यह सम्भलपुर है। जिससे आप बातें कर रहे थे, जो आपके ऊपर आशक्त होकर आपको फँसाया चाहती थी,वह यहाँ की महारानी मायादेवी है।

कुमार—मायादेवी ? मायादेवी के तो कोई बड़े नहीं है,—यह महाराज कहाँ से आटपके,-यह कौन है ?

कालिन्दी—आप उन सब भेदों को नहीं जानते,-हीरे के तिलस्मकी बहु माहारानी-महामाया को तो आप अच्छी तरह से जानतेही होंगे ?

कुमार-अच्छी तरह से तो नहीं जानता,-मगर हाँ, कुछ कुछ जानता हूँ।

कालिन्दी—कुछ कुछ क्यों,—आपने तो उस तिलस्म के सम्बन्धकी—"भेद से भरी,,—किताबको अच्छी तरह पढ़ा ही है। अस्तु-उनके तो एक दिखौवा महाराज मौजूद ही है,—वेही इन दिनों—उसी बहुरानी के कहने से—यहाँ आकर टिके हुए हैं। इसीलिए यह अपने जीजा के बुलातेही चली गई।

कुमार—क्या इसका, इन से भी कुछ भीतरी लगाव है ?

कालिन्दी—इन्ही से क्यों—मैं तो आज कई दिनों से इसकी लौंडी बनकर सब कुछ देख रही हूँ।

एक अदने अदने नौकरों से भी इस का गहरा लगाव लगा रहता है ।

कुमार—छीः छीः इतनी खूबसूरत—टहनी, और ऐसा ज़हरीला फल। खैर इससे हमें क्या मतलब,—अब बतावो,-किस तरहसे निकल कर अपने घर तक पहूँचना होगा ।

कालिन्दी-इसकी तरकीबतो मैं लडारही हूँ,—परन्तु सावधान ! देखिए,-किसी के आने का शब्द सुनाई पड़ रहा है। आप अपने भावको किसो तरह जाहर होने न दीजिएगा ? खैर—भोजन नकीजिए,—मगर दूध भर तो पीजिएगा ?

कुमार—तुम क्यों नाहक जिद करती हो,—मैं इस समय दूध तक भी न पीऊँगा ।

कालिन्दी—आप मेरे कहने से न पीयेंगे परन्तु जब मेरा महारानी ज़ोर देंगी तो झख मारेंगे, पीयेंगेही। इतने में महारानी मायादेवी भी आपहूँची । उसका चेहरा इस समय कुछ उतरा हुवा सा था,—उसने आतेही ज्योती की तरफ देखकर कहा-मैं घण्टे भरतक यहाँ रहूँगी नहीं, अतएव-तू अपने बदले यहाँ किसी को रख, छोटी जनी के पास चली ज़ा। आज बड़ा ही बेढब मामला आ खड़ा हुवा है ।

कुमार— कैसा बेढब मामला आ खड़ा हुवा है। यदि मेरे लायक हो—मैं कर सकता होऊँ-तो मुझे भी कहकर अपनी मदद में लेलो।

माया-नहीं,इस समय मैं आपको उन सब झमेले की बातें सुनाकर परेशान नहीं किया चाहती। वह मैंने आपही सुनी और आपही समझ भी लूँगी ।

कुमार-तबतो तुम मेरे साथ कुछ भी मुहब्बत नहीं रखती हो, अगर ऐसाही है तो मुझे यहां से जाने की इजाजत देदो, मेरा यहाँ कौन है, किसके लिए मैं रहूँ?

माया--(मुहब्बत से उनका हाथ पकड़ कर) नहीं नहीं, आप आपने चित्तको क्यों दुःखी करते हैं। मैंने आपको बहुत ही कमज़ोर देखकर उस भेद से वाकिफ नकिया,-आप सुनेंगे तो किसी तरह बर्दाश्त नकर सकेंगे,-मगर आपकी हालत मुझे उस तरह के कामों को लेनेका विश्वास ही नहीं दिलाती है।

कुमार-तोक्या मुझेतुम बिलकुलही कमजोर समझती हो?

माया—(हंसकर) मुझसे तो आप जबर्दश्त हैं, मगर उस काम से इस समय नहीं। आप घबड़ाइए मत,—कुछ देरके बाद मैं आकर आपको उस भेद से वाकिफ़ कर देती हूँ। फिर जो मुनासिब समझ में आवेगा सो मुताबिक कीजिएगा। कुमार ने जिदकरना मुनासिब न समझा,-इसलिए कुछ बोले नहीं, चुप रहे। इसके बाद मायादेवी कालिन्दी को लेकर शीघ्रताके साथ बाहर चली गई। उन दोनो के जातेही एक सत्रह अठारह बरसकी खूबसूरत औरत ने कमरे के अन्दर पैर रक्खा और—कुमार के पास आते आते दूरही से उसने कहा—कुमार! आप बड़े फेरमें फँसा चाहते हैं, अगर मेरा कहा मानिए तो,—शीघ्र पलंग के पीछे,—परदे के उस तरफ़ खड़े हो जाइये। नहीं तो महाराज को ख़बर लग गई है। वे आपकी तलाश में इधर ही आरहेहैं। आपको देख पावेंगे तो जरूरही मरवा डालेंगे?

कुमार—यह तो बतावो,-मैंने उनका कौन सा क़सूर किया है?

औरत—कसूर! क़सूर तो आपने हदसे बाहर कर रक्खा-

है। मगर अब ज्याद: बहस में वक्त को मत गुज़ारिए,—अगर आप अपनी बिहतरी चाहते होतो-उस परदे के पीछे छिपे रहिए।

कुमार—अगर मैं ऐसा न करूँ तो?

औरत—जल्द ही मौत से गले मिलने के लिए जायंगे। अपनी ज़िदका मज़ा भी पायगे।

कुमार—क्या मुझे मौत के हवाले करना खेल समझ रक्खा है?

औरत—[कुछ झेंप कर] यह तो नहीं मगर बहुतों के सामने आप अकेले क्या कर सकेंगे? खैर आपकी खुशी -मैं तो आपकी लौंडी हूँ इसलिए यह सब कुछ कह रही थी। इसके जावब में कुमार कुछ कहाही चाहते थे इतने में तेज़ीके साथ मायादेवी ने उस कमरेमें आ इसको ज़ोरसे ढकेल कुमार की तरफ़ देखकर कुछ घबड़ाई हुई आवाज़ में कहा—कुमार! आप जल्द उस परदे के पीछे छिप जाइए! मैं इस हरामज़ादी से समझ लूंगी। इतना कहने के बाद वह उसके झोंटे को पकड़ खींचती हुई चली गई। कुमार कुछ सोच समझ कर परदे के पीछे जा खड़े हुए। मगर उन्हें वहाँ आए अभी मुश्किल से एक मिनट गुज़रा होगा,—किसीने पीछे से उनके कन्धे पर हाथ रक्खा, उन्होंने चौंककर पीछे की ओर देखा, एक बड़ी ही खूबसूरत औरत उन्हें चुपचाप अपने साथ चलने के लिए इशारा कर रही थी, वह देख उन्होंने धीरेसे पूछा—तुम कौन हो? उसने इसका कोई जवाब नहीं दिया, सिर्फ अपने करीब आने के लिए कहा। वे कुछ सोच कर आगे बढा ही चाहते थे, इतने में जिस जगह खड़े थे, वह ज़मीन एका एक हिलकर नीचे की तरफ चली गई, साथ ही वे भी उसीके साथ नीचे तरफ गिरकर ग़ायब हुए।

तीसरा बयान।

"आती है मुसीबत तो गला छोड़ती नहीं।
नाता लगा के जल्द कभी तोड़ती नहीं" ॥
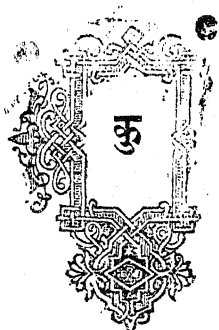
कुमारी किरणशशी को किसी अजनवी के हाथ से किनारे पर पहूँचते देख; माधवी का धड़कता हुवा कलेजा खुशी से उछलने लगा। वह भी दोही तीन हाथ मारकर किनारे पर आगई। कई एक बेढ़ब गोते लग जाने से कुमारी के पेटमें कुछ पानी आगया था, वह इससे बेहोश सी होगई थी। उस अजनवी ने किनारे पर लातेही माधवी की तरफ़ देखकर कहा—आप इनके पेटको अपनी गोदमें लेकर दबा दीजिए,-मैं पानी के बाहर होने की दवा पिलाता हूँ। माधवी ने वैसाही किया। अजनवी ने अपने बटुएमें से एक शीशी निकाल,-उसके अर्कमें से कई एक बूंद को कुमारीका मुँह खोलकर टपका दिया। वह अर्क पड़तेही,-जितना पानी कुमारी के पेटमें चला गया था, वह तत्कालही निकाल आया,-साथही कुमारी ने भी आँख खोलकर इधर उधर देखा। उनको ऐसा करते देख उस अजनवी ने फिर दूसरी शीशी निकाल उसमें के अर्क को कुछ पिला दिया।

इससे कुमारी के बदन पर बिजली की तरह ताक़त आगई। वह तुरन्त ही माधवी की गोदसे उठकर बैठ गई। यह देख अजनबी ने कहा—परमात्माने मुझे मौक़े पर यहाँ पहूँचा, मेरी मेहनत को सुफल कर दिखाया?

माधवी—यदि आप इस समय;--मदद पर न पहूँचेहोते तो मैं किसी तरह से भी कुमारी का उद्धार न कर पाती!

कुमारी—मुझे तो इस तरह़ बचने की ज़रा भी उम्मीद नहीं थी।

अजनबी—जिसका जबतक रहना होता है,-उसको तब तक प्रलयके हलकोरे भी कुछ नहीं कर सकते।

कुमारी—किन्तु बचानेवाला निमि त भी होना चाहिए अतएव आपके इस एहसानको मैं जबतक जीवित रहूँगी तब-तक कभी भी न भूलूंगी।

माधवी—परन्तु साथही आप अपनाभी परिचय देकर हम लोगों को कृतकृत्य कीएिज?

अजनबी—मेरा परिचय? मेरा परिचय पाकर आप लोग क्या करेंगे? मुझ अभागे को लोग इनदिनों अद्भुतनाथ के नाम से याद करते हैं।

कुमारी—(प्रसन्न होकर) आहा? आप अद्भुतनाथ हैं? मैंने आपके उपकारकी बातें कई मर्तबः सुनीथी परन्तु देखने का सौभाग्य प्राप्त नहीं हुवा था। आज परमात्मा ने इस तरह का सयोग दिलाकर मिलाया। मैं किस मुंह से अब आपकी प्रशंसा करूँ?

माधवी—आपके एहसानों से हमलोग सदैव दबेही जा रहे हैं।

अद्भुत—यह सब कहना सुनना,—मेरे ऊपर आपलोग

की असीम मेहर्बानी है । मैं उसीदिन अपने को अहोभाग्य समझूंगा, जिसदिन दोनों कुमारोंको मुंगेरके कीले पर राजी खुशी के साथ बैठे हुए देखूँगा।

माधवी—ठीक है,-यह हम लोगों के लिए सब से बढ़कर खुशी की बात समझनी चाहिए। परन्तु यहतो बताइए,-आप इस मौके पर इस जगह कैसे आपहूँचे ?

अद्भुत— मैं यहाँ कैसे आ पहूँचा ? यह सब इत्तफाक की बात है। बड़े कुमार रणधीरसिंह और कुमारी सावित्री-को छुड़ाने जाकर मैं, जीवनसिंह और कालिन्दी फंस गएथे, परन्तु मेरी एक परम हितैषिणी मित्र ने—जिसका नाम मदन-मोहनी है,—मौके पर पहूँचकर छुड़ा दिया।

माधवी-(चौंककर) मदनमोहनी ? यह नाम तो मैंने कहीं सुना भी है ?

अद्भुत—हाँ, सुना होगा ? उसके बरोबर बहादुर, निडर, चालाक औरत तो शायदही इस दुनियें के परदे में और कोई होंगी, उसकी मेहर्बानी मेरे ऊपर बहुत रहा करती है। उसने अपनी जिन्दगीमें बहुतही विचित्र, अमानुषिक कार्य किएहैं।

कुमारी—आपने क्या कुछ कम आश्चर्य का काम किया है ?

अद्भुत-उसके सामने मैं कोई चीज नहीं हूँ, अस्तु उस फन्दे से छूटने के बादही जीवनसिंह और कालिन्दी को तो छोटे कुमार महेन्द्रसिंहको छुडाने के लिए सम्भलपुर भेज दिया। मैं बड़े कुमार को छुडाने के लिए शेरघाटी की तरफ जारहा था, इतने में उसी मदनमोहनी के कहने से दीनाज-पुर के छोटे कुमार अजयसिंहको हजारीबाग के नवाब की

छोटी लड़की हुस्नबानू के हाथ से छुड़ाने के लिए एक तिलस्म घांटी में रुक गया।

माधवी—(घबड़ा कर) वे उसके फन्देमें कैसे आगए?

अद्भुत—उधरका किस्सा तो आप सुनही चुकी होंगी। उधरभी बड़े बड़े गुल खिलरहे हैं। दोनों कुमारों के साथही साथ कुमारी सरोजिनी का भी पता नहीं था। ऐसे समय दुश्मनों की खींचातानी में किसी चालाकी से वह अजयसिंहको उड़ालाई थी। मैंने मौके पर पहूँच कर उन्हे तो छुडा दिया, मगर कुमारी कनकलता को नहीं छुडा सका। उन्हे नजाने उन सब चुड़ैलोंने उसी समय कहीं दूसरी जगह हटा दिया था।

माधवी—अफसोस! बिचारी बड़ी तकलीफ भोग रही होगी।

अद्भुत—उसका प्रबन्ध मैं कर आया हूँ।

किरण—कैसा प्रबन्ध कर आए हैं?

अद्भुत—आपके नाना इन्द्रदेव को और जयदेवको पीछा करने के लिए छोड़ आया हूं। वे दोनो जीजान से उसमें लगे हुएहैं, अतएव अपना उद्देश्य पूरा किए बिना न लौटेंगे?

किरण—तबतो उस तरफ से कुछ दिलजमई हो गयी!

अद्भुत—उसके बाद मैं बड़े कुमार और कुमारी सावित्री की खोज के लिए इधरही आरहाथा, इतने में आप की नाव डूबते देख बचाने के लिए कूद पड़ा।

किरण—तो आपने उनका पता पाया होगा?

अद्भुत—अभी तक तो नहीं, मगर आज दिनभर में उनका पता लगाए बिना भी नछोड़ूंगा।

किरण—(आंखों में आंशू भरकर) हमलोग बड़े मजे में

निकल चुके थे,—मगर अफसोस! दुश्मनों ने अचाञ्चक पहूँचकर बीचही में हमलोगों को अलग कर दिया।

अद्भुत—आप घबड़ाइए मत,—हमलोग-चुपचाप बैठे हुए नहीं हैं। चारो तरफ से इसी फिक्र में पड़े हुए हैं। आज नहीं तो कलतक उनका पता लगाकर छुडाही लेंगे! मगर—हाँ अब आपका क्या इरादा है?

किरण—बिना कुमार को छुडाए मैं किसी तरह से भी घरको लौट न चलूंगी।

अद्भुत—आपके पिता, माता, भाई लोग घबड़ातेहोंगे, आपको इस तरह गलीगली ठोकरें मारकर चलना उचित नहीं है।

माधवी—मेरीभी यह राय नहीं है। आपको मैं चुनारगढ़ पहूँचा आती हूँ।

किरण—नहीं, मैं आप लोगोंका कहना ओर सब बातें शिर आंखों से मानती हूँ, मानूंगी, मगर यह बात मैं किसी तरह से भी न मानूंगी।

माधवी—यदि आप चुनारगढ जाना नचाहती होंतो मुंगेर चलिए, वहाँ तो आपको जाने में कोई उज्र नहीं है?

किरण—नहीं, मैं बिना कुमार को छुड़ाए कहीं भी न जाऊंगी। आपलोग मेरी ओर से निश्चिन्त रहिए। मैं अपना बचाव हर तरह से आपही कर लूंगी।

माधवी—(सोच कर) खैर ऐसाही सही, मैं आपकी हिफ़ाज़त के लिए हर समय आपही के पास रहा करूँगी।

अद्भुत—मगर इस तरह की परेशानी उठाने से तो कोइ नतीजा निकलता नहीं है। मुझे महाराज इन्द्रजीतसिंह कुछ

कहेंगे तो क्या जवाब दूँगा ? कुमार रणधीरसिंह ही कुछ कह बैठे तो किस तरह समझाऊँगा ?

किरण—यह सब मैं अपने ऊपर लेकर जवाब दूँगा।

अद्भुत—तो आप अकेली कहाँ जाकर क्या करेंगी ?

किरण—आप घबड़ाइए मत, मैं माधवी चाची को साथ लेकर उस औरत से मिलूँगी, जिसका इन दिनों आपको भी बहुत कुछ भरोसा हो चला है।

अद्भुत—(प्रसन्न होकर) तब तो ठीक है, मगर आप उन्हें इस समय पावेंगी कहाँ ? अच्छा, चलिए,—मैं उनका पता लगा कर आपको उस तरफ़ भेज देता हूँ। इतना कह कर तीनों उठ खड़े हुए। इस समय चारो ओर प्रभात कालका अत्यन्त मनोरम उजियाला फैल चुका था। तीनों किनारे से हटकर कुछ ही दूर आगे बढे होंगे,—इतने में किसी आदमी को लोमडी की तरह शरपर पैर रख भागते हुए देखा। अद्भुत-नाथ से रहा नहीं गया,—वह इन दोनों को पीछे छोड़ तेज़ी के साथ दौड़ चला। वे दोनों आँखों की ओट होते ही कई एक आदमियों ने आकर इन दोनों को घेर लिया। अपने को इस तरह दुश्मनों के बीच में पाकर माधवी ने बड़ी फूर्तिके साथ अपनी क़मर से खञ्जर निकाल, कुमारी को अपने पीछे कर लिया। वे सब आने वाले—नव्वाबके मुसलमान सिपाही मालूम पड़ते थे। उन्होंने माधवी को खञ्जर लेते देख,-दूरही से कहा—बस, अपनी ख़ैरियत चाहतीहोतो ख़ञ्जर को रख कुमारी को हम लोगों के हवाले करदो ? इसके जवाब में माधवी कुछ कहाही चाहती थी इतने में—कुछ दूर से किसीने अपने सुरीलेकण्ठ से कहा—इस जन्म में तो कुमारी-को तुम लोग किसी तरहसे भी नहीं ले सकते ? यह सुन सबके सब आश्चर्य्य में भरे हुए उधर ही देखने लगगए।

चौथा बयान ।

" लाख सोचो,, पर नहीं बनता है जब जाता बिगड़ ।
खुशनहीं आता कभी दुख, हरघडी आता बिगड ॥
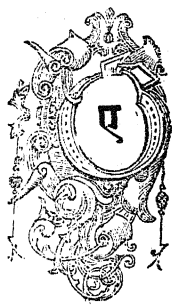
एक निहायत ही सजे सजाए कमरे में कुमारी कुसुमलता अकेले टहल रहीहै । उसका चांदसा चेहरा कुम्हलाया हुवा है। उसको किसी तरह से चैन नहीं मिलती है । रह रह-कर लम्बी साँस निकल आती है । आँखों में आँशू भरे हुए हैं। दिलकी धड़कन किसी तरह से कम नहीं होती है। टहलते टहलते उसने आपही आप कहा—अफ़सोस! मैं यहाँ आकर बुरी तरह फँस गई हूँ। मेरा किसी तरह से भी ज़ोर नहीं चल सकता। इसके रङ्ग ढङ्ग बहुत ही बुरे मालूम पड़ते हैं। यह उनके ऊपर ज़रूर हो आशक है,—बनने के लिए यह लाख बनती है मगर मेरा दिल किसी तरह गवाही नहीं देता है। मगर परन्तु हमारे ऐयारों के हाथ से मुझे किस तरह उड़ा मँगवाया । यह भी कोई ज़बर्दस्त ही मालूम पड़ती है। आज दश रोज़ से यहाँ पड़ी हुई हूँ परन्तु कुछ भी ज़ाहर होने नहीं देती है। मैं अब क्या करूँ,—हमारे घरके लोगों की क्या हालात हो रही होगी। वे सब मेरे बारे में क्या सोचते होंगे ?•दोनो भैय्या का पता लगाया नहीं। हमारी सखियोंका क्या हाल होगा ? यह रोज़ ही मुझे भरोसा दिया करती है,—

मगर अब मुझे बहुत ही कम उम्मीद हो चली है। आज जब वह आवेगी तब कुछ जोर देकर पूछूंगी,—देखें क्या कहती है? परन्तु वह किसी तरह बतावेगी नहीं, उसके मनमें कपट-का बालू भरा हुवा है खैर जो कुछ भी हो,—आज उससे साफ़ साफ़ पूछूँगी। अगर उसने न बताया तो उसी के आगे जान देने पर तैय्यार हो जाऊँगी। इसी तरह की बातें सोचते सोचते कुमारी कुसुमलता बहुत ही बेचैन होगई। उससे टहला नहीं गया,—सामनेके एक कोंचपर जा बैठ गई। उसके उसपर बैठतेही एक अठारह उन्नीस बरषकी अत्यन्तही सुन्दर औरत ने उसके पास आ,—मुहब्बत से उसका हाथ पकड़ कर कहा—बहन कुसुमलता! तुम इस तरह रोज़ ही चिन्तित होकर अपने को क्यों घुला रही हो? देखो—तुम्हारा चाँद-सा मुखड़ा एक दम कालेपरदेके भीतर छिपता हुवा जा रहा है।

कुसुम—(उसे अपने पास बिठाकर) मैं क्या करूँ बहन चम्पा? तुम अपना हाल किसी तरह से भी मुझे कहती नहीं हो,—न कुमार ही से भेंट कराती हो? कब तक मैं आसरे आसरे में इस तरह पड़ी रहूँ? मेरे घर के लोग क्या कहते होंगे? मेरी तरह तुम्हे फिक्र होती तो कभी भी तुम्हारा यह चेहरा हँसता हुवा दिखलाई नहीं पड़ता।

चम्पा—सच है, अपनी अपनी फिक्र सभों को बड़ी होती है,—मगर तुम उदास क्यों होती हो,—पूछो,—आज मैं तुम्हे सच सच बातें कह सुनाऊँगी?

कुसुम—सब से पहले यह तो बतावो,—तुमने मुझे उतना पहरा रहते हुए मेरे महल से किसतरह उड़ा लेआई?

चम्पा—यह तो समझने की एक मामूली बात है। मैंने अपनी ऐयारी कुन्दनको तुम्हारे महल के भीतर कर रक्खा था,—

उसीने मौक़ा देखकर तुम्हे उठा लेआई। बजड़े पर आने के बाद तुम्हारे कई एक ऐयारोंने हम लोगोंको घेराथा, मगर मैंने अपनी चालाकीसे-उन सबों को एक मिट्टीकी गठरी दिखा,-उसको गंगाजो में फेंक धोका दिया। वे सब तुम्हारीहो गठरी समझ उसीको खोजने के लिए कूदपड़े, मुझे मौका मिला, मैं अपने बजडे को तेजीके साथ भगाकर चली आई ?

कुसुम—(हंसकर) तुम भी बड़ीही चालाक मालूम पड़ती हो ?

चम्पा—खैर किसी तरह तुम्हारे चेहरे परसे हँसी तो दिखलाइ पडी।

कुसुम—अच्छा, यहतो बतावो,-तुम किसकी लड़की हो,—यह जगह कौन है ? मुझे किस मन्शाय से ले आईहो ?

चम्पा—तुम्हे किस मन्शाय से ले आई हूँ,—यह तो मैं कई बार कह चुकी हूँ,-फिर भी स्पष्ट रूप से कह सुनाऊँगी। मगर सबसे पहले तुम्हारे दिलका खुटका मिटाकर मैं अपना सच्चा परिचय आज दिए देती हूँ। तुमने रेवाके महाराज का नाम तो सुनाही होगा ?

कुसुम—क्यों नहीं,—महाराज गजेन्द्रसिंह से तो हमलोगों का कुछ नाता भी है! वे बड़ेही सुशील, सीधे साधे मिजाज के हैं। उनकी दो लड़की और एक लड़के भी हैं। एक मर्तबः वे किसी कार्यवश मुंगेर आकर कई दिन तक रह-भी गए हैं। उनको मैं अच्छी तरह से पहचानती भी हूँ।

चम्पा—हाँ, तो मैं उन्ही की बड़ी लड़की सुकेशी हूँ। यह रेवाहै। मैंने तुम्हे अपने रङ्गमहलमें लाकर रक्खा है।

कुसुम—(खुशहोकर) तबतो बहन ! तुम मेरी करीबही की रिश्तेदार हो। फिर मुझ से आज तक क्यों अपने को छिपाए

हुए रक्खी रही थी, तुम्हारी छोटी बहन कहाँ है?

सुकेशी—वह भी यहीं है,—आज मैं तुम से मिलाऊँगी भी मगर—तुम्हे मेरा एक काम करदेना होगा।

कुसुम—वह क्या?

सुकेशी—तुम कुमार चन्द्रदेव को तो खूब चाहती हो?

कुसुम—(शर्माकर) यह तुम मुझ से बार बार क्यों पूछा करती हो। अगर मैं उन्हे न चाहती तो आजतक उन्ही के भरोसे पर तुम्हे वे पहिचाने हुए भी इस तरह यहाँ बैठी रहती?

सुकेशी—तो मैं भी उन्हे खूब चाहती हूँ,—यह सुनकर तुम्हे रञ्जतो न हुवा होगा?

कुसुम—(खिन्न होकर) रञ्ज किस बातका? मैं इसके लिए क्या कर सकती हूँ। तुम्हारी चाहके साथ साथ उनकी भी चाह है। उनको तो मैं अपना तनमन दे चुकी हूँ,—वे चाहे मुझे अपनावें या नहीं,? परन्तु—मैं अपने कर्तव्य को—उचित कर्तव्य समझकर पालतीही रहूँगी। मर्द एक को छोड़ दश औरतें कर सकते हैं,—वे तुम्हे खुशी से हाथ पकड़कर अपनी बनालें, मुझे इस में किसी बात की भी हानि नहीं है।

सुकेशी—तुम्हे हानि नहीं है, मगर वेतो अपनी हानि समझते हैं।

कुसुम—उन्हे किस बातकी हानि है। तुम्हारी ऐसी खूबसूरत नाजनी अनायासही अपने ऊपर जान देती हुई मिलरही हो तो,—इसमें मिलने वाले की कौन सी हानि है?

सुकेशी—यह सब ठीक है,—मगर वे तुम्हे छोड़ मुझे फूटी आँखों से भी देखना नहीं चाहते हैं इसोलिए......

कुसुम—[बातकाटकर] मैंने तुम्हे अपने यहाँ इस तरह

कैद कर मजबूत रख छोड़ा है। यही बातहै न? सुकेशी! तुम एक बहुत बड़े महाराज की लड़की हो,—तिसपर मुझसे कुछ नातेका भी बर्ताव है। ऐसी अवस्था में तुम्हे मुझे इस तरह यहाँ लुका छिपाकर अपना मतलब निकालने की बन्दीशें न बांधनी चाहिएथी। मैं तुम्हारे भीतर से भीतर का भाव भी समझ चुकी हूँ। मुझे तुम इसीदम छोड़ दो नहीं तो मैं कह रखती हूँ, तुम्हारे हकमें ज़रा भी अच्छा नहीं होगा।

सुकेशी—[नर्मियत से] देखो बहन! तुम मेरे साथ इस तरह बिगड़ कर क्यों मेरी ज़िन्दगी बर्बाद करती हो। मैं तुम्हे कुमार चन्द्रसिंह से आजही मिलाऊँगी, परन्तु वादा करो,—

कुसुम—[खड़ी होकर] नहीं,मैं किसी तरहका भी वादा नहीं कर सकती। तुम चाहे मुझे-हर तरहकी तकलीफ़ दो;-मगर मैं उन्हे तुम्हारे बारेमें कुछ न कहूँगी,—न कहने का इरादा-ही रक्खूँगी। तुमने एक तो मुझे अपना मतलब निकालने के लिए,-मेरे घर की वैसी नाजुक हालत देखते हुएभी मुझे उड़ा मँगाया; दूसरा यहां लाकर भी इतने दिनों तक अपना सच्चा हाल नहीं कह सुनाया, तीसरा—मैं तुम्हे अच्छीतरह से जानती हूँ,—तुम्हारी ऐसी औरत को चाहे तुम लाख खूबसूरत क्यों न हो—वे थूकने भी नहीं आवेंगे।

सुकेशी—[लाल होकर] देखो कुसुम! यह मुंगेर का कला नहीं है। यह सुकेशी का रङ्ग महल है। यहाँ तुम इस तरह मेरे ही सामने मुझे गाली नहीं दे सकती हो, जरा जबान सम्भाल कर बात करो!

कुसुम—[बिगड़ कर] बदमाश! चुडैल! धोकेबाज-हरामजादी! तुम अपनी ज़बान को सम्भालो? यहाँ तो यह ज़बान हमेशा से चलती हुई आई है और हमेशा इसी तरह

चलती ही रहेगी। तुम अपना भला चाहती हो तो मुझे इसी दम अपने महल से बाहर निकल जाने दो?

सुकेशी-यह तो तभी होगा जब तुम अपने हाथसे कुमार चन्द्रदेव को चीठो लिख कर यहाँ बुलवा मँगावोगी।

कुसुम—क्या तुम उन्हे भी कैद कर अपनी साध पूरी करना चाहतीहो। यह मुझसे हर्गिज़ नहीं हो सकेगा। जावो, हट जावो मेरे सामने से। मैं आज से तुम्हारा मुँह नहीं देखा चाहती।

सुकेशी—(खड़ी होकर) अच्छी बात है, देखें,-कब तक तुम अपनी ज़िद पर अड़ी रहती हो। मैं तुम्हे आज से खाना भी बन्द किए देती हूँ। इसकी ऐसी बातें सुनतेही कुसुमलता को बेहिसाब क्रोध चढ आया, वह अपने इस क्रोध को किसी तरह रोक न सकी,-शेरनी की तरह उछल कर जोर से धक्का देती हुई उसके ऊपर चढ बैठी,-वह इसके धक्के को सँभाल न सकी, चारो ख़ाने चित्त होकर लेटगई। कुसुमलता ने साथ-ही उसकी छाती पर आसन जमा,एक हाथसे उसका गला दबा कर कहा,—बोल, हरामज़ादी! बोल, अब तुझे मैं क्या करूँ? बहादुर नरेन्द्रसिंह की लड़की के साथ बेईमानी करना हँसी खेल नहीं है? मैं चाहूँ तो इस समय तेरा गला घोंटकर मार सकती हूँ, मगर नहीं, मैं तुझ ऐसी पापिन को मार कर अपने शर पर कलङ्कका टीका नहीं लगाया चाहती,-तेरा इस समयमेरे हाथसे छूटने की कोशिश करना बिल्कूल फजूलही है। इतना कह कर उसने उसकी कमर से कमरबन्द निकाल, मज़बूती के साथ हाथ पैर बाँध,खड़े होकर कहा-क्या अबभी तेरा इरादा मेरी तरफ़ से वैसे ही है? बोल; बोलती क्यों नहीं है! मुझे धोका देकर कुमार चन्द्रसिंह को फँसा याचाहती थी,—
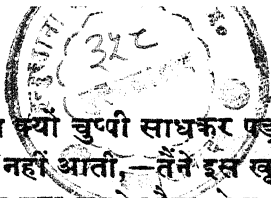
अब क्यों चुप्पी साधकर पड़ी हुई है ? बेहया ! तुझे शरम भी नहीं आती,—तैंने इस खूबसूरती के फूलको कितनों का हार बना अपने शौक़ को पूरा कियाहै, इस चिचोड़ी हुई हड्डी-को तू एक पवित्र आत्माके हाथ सौंपा चाहती थी। बस, अब ज़रा भी नीयत में फ़र्क डालोगी तो कहीं की भी रहने न पावोगी ? इसका जवाब वह क्या देती, चुप चाप आँखों में आँशू भरे उसकी ओर देखने लगी। इतनेही में तेज़ी के साथ हाथ में ख़ञ्जर लिए हुए कादम्बिनी ने उस कमरेमें आकर कुसुमकी ओर देखती हुई कहा—शाबाश बहन शाबाश ! आज तुमने अपने बहादुर भाइयों का मुकाबला कर दिखाया। जैसा इसने कर्म किया था वैसाही फल भी पाया। अब चलो, तुम्हे बाहर करने के लिये आई थी,-ईश्वर ने आपही आप मौक़ा दिया, नहीं तो कई दिन तक मुझे बखेड़े में पड़े रहना पड़ता।

कुसुम—मगर तुम कौन हौ, यह तो पहले बताओ ?

काद—मैं कान हूँ;—मुझे तुम पहचानती नहीं हो, मगर मेरा नाम तो अवश्य सुना होगा, मैं मधुपुर की महारानी अम्बालिका की छोटी बहन कादम्बिनी हूँ।

कुसुम—[प्रसन्न होकर] तुम कादम्बिनी हो ? सचमुच तुम कादम्बिनी हो ? [हाथ फैलाकर] आओ बहन! मैं तुम से मिलने के लिए कबसे उत्सुक थी। इतना कहकर वह अत्यन्त उद्वेग के साथ उसके गले से लपट गई। उसने भी भर जोर इसे पकड़कर गले लगाया। दोनों की आँखों से अविरल धारा आँशू निकलने लगा। इतनेही में एक लौंड़ी को साथ लिए हुए स्वामी अच्युतानन्द आते हुए दिखलाई पड़े। उनको देखते ही डरके मारे कादम्बिनी जोर से चिल्ला उठी।

पाँचवाँ बयान ।

"साथ जिसका दे रहे हो, है वही दुश्मन बड़ा ।
विष हलाहल से भरा, है एक सोने का घड़ा ॥"

अपने चारो ओर कई एक सवारों को आते हुए देख कुमार रणधीरसिंह तलवार खींच उसी चबूतरे पर उठ खड़े हुए। सब सवार लगभग बीस बाइसके थे। उन्होने उनको लड़ने पर मुश्तैद देख,—अपने अपने हथियारों को सँभाला;—साथ ही एकने चबूतरे के करीब आकर कहा—बस, तुम अपनी खैरियत चाहते हो तो इस औरत को हम लोगों के हवाले कर दो?

औरत—(चिल्लाकर) देखिए, यह सब हरामजादे फिर मुझे किसी तरह से भी न ले जाने पावें।

कुमार—(सवार से) तुम किस बीरते पर इस औरत को मुझसे माँग रहे हो?

सवार—मैं किस बीरते पर माँग रहा हूँ वहतो बताने से काम नहीं चलता,—तुम खुदही अपनी आँखों से देख रहे हो। अतएव मैं किसी ऐरे गैरे से ज्यादः बोलने की तकलीफ न उठा अपनी चीज मांगता हूँ। तुम फौरन से पहले इस चबूतरे को छोड़कर हट जावो?

कुमार—(गुस्से से तनकर) रणधीरसिंहके सामने

से जीतेजी किसी को जबर्दश्ती उठाकर ले जाना जरा टेढीखीर है। आवो, अगर तुम में जराभी मर्दूमी होतो दो दो हाथ चलाकर इसको उठा ले जावो?

सवार—क्या तुम नरेन्द्रसिंह के लड़के रणधीरसिंह हो?

कुमार-इस से क्या मतलब? तुम्हे अगर बहादुरीका तमाशा देखना होतो इसी दम देखलो? यह सुनतेही उस सवार ने इनके ऊपर भाले का वार किया। कुमार ने उसको खाली देकर बड़ी फूर्तिकेसाथ, उस सवारको दो टुकड़े कर उसके घोड़े पर सवार हो,-दो सवारोंको काटते छाँटते, अपने घोड़ेके पास पहुँच, उसपर अपना आसन जमा,-बाकी के सवारों के सामने आ,—ललकार कर कहा-अगर इन लोगों की तरह तुमलोगों को भी मरना हो तो, आवो,-मेरा सामना करके देखलो। कुमार ने यह काम पलक झपकतेही करदिखाया. उनकी ऐसी तेजी देख सबके सब घबड़ा उठे। किसी की हिम्मत उनसे लड़नेकी न हुई। सुन्दरी ने बड़े जोर से-शाबास! बहादुर इसी को कहते हैं कहा। उसकी यह बातें सुन,—सबके सब सवार हतोत्साहहो, अपने घायल तीनों साथियों को उसी तरह तड़पते हुए छोड़, जिधर से आए थे उधरही का भाग निकले। इस तरह मामूली कामहीसे मैदान खाली होते देख.-सुन्दरी की तरफ देख कुमार ने कहा-अब ये लोग कभी भूलकर भी इधर पैर न बढ़ावेंगे।

सुन्दरी-[प्रसन्न होकर] हाँ, अब कभीभी आनेका इरादा न करेंगे। मगर यहतो बताइए, जैसा आपने कहा था,-क्या आप प्रतापी महाराज नरेन्द्रसिंहके बड़े लड़के कुमार रणधीरसिंह हैं?

कुमार—(मुस्कुराकर) क्या तुम्हे इसमें कुछ शक मालू-म पडता है ?

सुन्दरी-नहीं नहीं, शककी बात नहीं है, मैं आपको पहचानती नहीं हूँ, इसीलिए यह पूछ बैठी थी ।

कुमार-(हँसकर) हाँ, समझलो मैं वही हूँ ।

सुन्दरी—(हाथ जोडकर) परमात्मा को लाखों धन्यवाद देती हूँ, जिसने मेरी प्रार्थना को सुन अन्त में उन्ही के हाथ से मेरा उद्धार भी करदिया ।

कुमार—[बातका रूख बदल कर] अब यहाँ देरतक बैठे रहना ठीक नहीं है। क्या तुम अकेले घोड़े पर सवार हो-सकती हो ?

सुन्दरी—[हँसकर] क्यों नहीं, क्या मुझे घोडा चढना नहीं आता है ?

कुमार—नहीं नहीं, मेरे कहनेका मतलब यह नहीं है । तुम बहुतही कमजोर होरही हो इसलिए,—अकेले घोडे पर सवार हो सकोगी या नहीं-यही सोचकर मैंने यह पूछा था। अच्छा तो, मैं उस घोडे को जगत के नीचे कर देता हूँ । तुम उसपर सवार होलो ।

सुन्दरी—मगर मेरी सखी जमनाका क्या होगा ?

कुमार-वह तो यहां कहीं दिखलाई नहीं पडती है। कहो तो उसको उस झाडी में जाकर खोज आऊँ ?

सुन्दरी—नहीं नहीं, मुझे अकेली छोडकर अब आप कहीं मत जाइए ?

कुमार-अच्छा,तुम भी मेरे साथ चली चलो। इतना कह-कर कुमार ने एक सवार के घोड़े को पकड़, जगत के नीचे

ला खड़ा किया। सुन्दरी उस पर सवार होगई। इसके बाद कुमार ने उसकी तरफ देखकर कहा--अच्छा, यह तो बतावो, तुम कौन हो, तुम्हारा मकान कहां है। तुम यहाँ किसलिए आई थी?

सुन्दरी—मैं पालकोटके महाराज की लड़की चन्द्रप्रभाहूँ। किसी आवश्यकीय कार्य वश मैं अपनी प्यारी सखी जमना को लेकर अपने को छिपाती हुई बसिया जारही थी इतने में यहाँ पहूँचकर इस शेर के पञ्जे में जापडी।

कुमार—यह सब सवार कौनथे?

चन्द्रप्रभा—हजारी बाग के नव्वाव नसिरुद्दीन के सवार हैं। वह हरामजादा सालों से मेरे पीछे पड़ा हुवा है। आज भी उसके आदमीयोंने मुझे एक सखी के साथ इस तरह अकेली इसतरफ आती हुई देख लियाथा; इसीलिए यहां आकर आपको भी डपट बताया।

कुमार-खैर अब उस तरफ से तुम निश्चिन्त होगई। अब चलो, तुम्हारी सखी जमना को खोजते हुए, तुम्हे तुम्हारे निश्चित ठिकाने पर पहुंचा कर मैं अपना रास्ता लूं। इतना कहकर उन्होने अपनी जेब से एक कागजका टुकड़ा निकाल उसमें कुछ लिख, उसी जगह छोड, चन्द्रप्रभा से कहा—अब चलो,उस झाडीमें देखकर,-सामने से चले चलें। इस समय बारह बज रहा था। सूरज अपनी तेजी पर आसमानके बीचो-बीच खड़े हो जमीनको तपा रहे थे। दोनोंने घोडे को बढाकर सामने की झाडीके एक एक पत्ते तक को छान डाला, मगर किसीका भी पता न लगा,—अन्त में लाचार होकर चन्द्र-प्रभाको तरफ देख कुमार कुछ कहा ही चाहते थे

इतने में एक पत्ते से ढकेहुए गड्ढे में पैर फंसाकर घोड़ा गिर पड़ा,-कुमार संभलते सँभलते भी कुछ दूर छटक कर गिर पड़े । साथ ही वह जमीन कई गजकी गोलाई को, लेकर इन्हे लिए दिए नीचेकी तरफ ढुलकते ढुलकते गायब हो गई ।
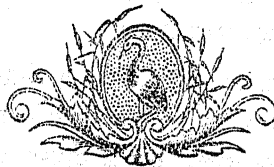
छठवाँ बयान।

" जमीं देतीहै फल वैसाहि जैसा बीज बोवोगे।
लगाकर पेड़ गूलरका कहाँ से आम ढोवोगे ? "

घड़ी भरसे ज्यादः रात न बीती होगी। पालामौकी नव्वाबजादी जेबुन्निसा अपनी सब तरहके ऐशो आरामसे सजी हुई कोठरी में गावतकिएके सहारे एक मखमली गद्देपर बैठी हुई,--अपने सामने की हमसीन औरत के साथ धीरेधीरे बातें कर रही है। रोशनी से कमरा जगामगा रहा है। चारो ओर की खिड़कियां खुली हुई है। ठण्डी हवा आरही है। जेबुन्निसा के मुँह से खुश्बूदार तम्बाकू का फव्वारा छूट रहाहै। बातें करते करते उस ने जोरसे एक कस खींचकर कहा--हीना! मैं अपने वालिद की बातें मानकर किसी तरह से भी उसको उनके हवालेकर अपने अर्मानों पर लात नहीं मार सकती।

हीना--यह तो हुजूर! मैं भी आपको सलाह नहीं देती, मगर उनकी जिद भी अजब तरहकी रहा करती है।

जेबु--चाहे जो कुछ भी हो मगर मैं उसको उन्हे देकर अपना मतलब साधने का जरीया किसी तरह से भी अपने हाथसे जाने नहीं दूँगी। गो उन्होने मुझे पाला,पोषा इतना बड़ा किया मगर मैंने भी अपना सब कुछ देकर उनकी हरएक ख़ाहिशोंको पूरा करनेमें कोई बात उठा न रक्खी। अब, इस समय यह एक बात मैं अपने लिए, अपनी जिन्दगी के लिए उन्हे किसी

हालत से भी नहीं दे सकती। तू जा, जाकर यही सब बातें मेरी तरफ़ से अर्ज कर दे, अगर वे माने तो ठीक ही ठीक है, न माने तो मैं उसको लिए दिए अपने मामू के यहाँ चली जाऊँगी !

हीना—मैं कहने के लिए तो हर तरह से समझा कर कहूँगी मगर वे किसी तरह से मानेंगे नहीं। हुजूर ने सावित्री को नाहक ही मायादेवी के हवाले कर दिया।

जेबु—यह तो ठीक है. मगर उसके बदले मैं भी तो उन दोनो बहिनों से वक्त पर अच्छा काम निकाल सकूँगी।

हीनाहुजूर का कहना बजा है, मगर हिन्दू की जात हमलोगों से बड़ी ही बे मुरौवत करतीहै। वह अपना मतलब निकलने पर अंगूठा दिखाने से बाज़ भी नहीं आती है।

जेबु—यह सब मैं अच्छी तरह से जानती हूँ,—मगर मायादेवी और महामाया का राज़ मुझसे छिपा नहींहै। उन दोनो ने मेरे साथ रहकर हजारों तरह का ऐश किया है,—अब वे मुझसे बेइमानी करके अपनेको पाक साफ रखही नहीं सकते। उन दोनो की नथुनी अब तक भी मेरे हाथ में पड़ी हुई हैं। मैं चाहूँ तो उसीके जरीए से उन्हे मटियामेट कर सकती हूँ।

हीना—यह सब कुछ तो ठीक है, मगर मुझे इतमीनान नहीं होता, खैर तो मैं छोटी शाहजादी साहबा हुस्नबानू से जाकर क्या कहूँ ?

जेबु—वह एक मर्तब मेरे पास आजाये तो सब कुछ मैं खुद समझा कर बताऊँगी।

हीना—मगर वे इस वक्त यहाँ तक न आवेंगी।

जेबु—उससे कह देना,—वह अजयसिंह के लिए जरा भी फिक्र न करे। मैंने उनके एक आदमीको मिलाकर अपनी मुट्ठी

में कर लिया है। वह उन्हे फँसा कर जिस वक्त लावेगा। उस वक्त मैं उसकी मुराद पूरी कर दूँगी।

हीना—इन दिनों अद्भुतनाथ बेढब हम लोगों के पीछे पड़ा हुवा है,—उसी की वजह से उस दिन उनका बना बनाया खेल बिगड़ गया।

जेबु—(काँप कर) उसने मेरे साथ भी वही सलूक करके चौपट कर डाला।

हीना—वह क्या इन दिनों हुजूर के वालिद से डरता नहीं है।

जेबु—डरता तो बहुत कुछ था मगर न जाने क्यों इन दिनों उतना डरता नहीं है। मालूम होता है, उसको किसी जबर्दश्त ताकत का सहारा मिल गया।

हीना—जीहाँ,जरूर ऐसीही बातहै,अगर ऐसा न होता तो वह हज़ारी बागकी अमलदारी के भीतर इस तरह बेखौफ कभी घूमने का कस्द न करता। उसको मैंने कई मर्तब हजूर के वालिद का पैर पकड़ हाथ जोड़ते हुए देखा है।

जेबु—अब तो वही खुद उन से हाथ जोड़वाने के लिए मुस्तैद है, खैर कोई परवाह नहीं, अब भी मेरे पास उसको दबाने का एक जरीया बाकी रह ही गया है।

हीना—जीहाँ, छोटी शाहजादी साहबा भी यही बात कहती थीं।

जेबु—अब तुम कल सवेरे ही यहाँ से चली जाकर बहन को लेआवो तो, हम दोनो एक मर्तब संम्भलपुर चली जायं। इस के जवाब में हीना कुछ कहाही चाहती थी इतनेमें सामने के दरवाजेसे धीरे धीरे अद्भुतनाथ ने आकर, जेबुन्निसाकी तरफ देख, मुस्कुराते हुए कहा—आदाब अर्जहै शाहजादी

साहबा ! उसको एकाएक इस तरह से आते देख दोनो एक-दम घबड़ा उठी। मगर जेबुन्निसा बड़ी ही चालाक और धूर्त्त औरत थी, इसलिए जल्दही उसने अपने को सँभाल बनावटी हँसी को दिखाती हुई कहा—अहा! अद्भुतनाथ ! तुम आगए, भई ! बहुत दिनों के बाद आज यह चांदसा मुखड़ा तो नज़र आया। भला, मेरा ऐसा कौनसा कसूर था जिसके लिए तुम मुझसे मिलने में भी नफरत किया करते थे !

अद्भुतनाथ—(हँस कर) तुम भूलती हो शाहजादी साहबा ! मैं तो तुम्हारे साथ कई मर्तबः मिल चुका हूँ, मगर तुम्ही नफरत से अपने पास ज्याद ठहरने नहीं देती। क्या, अब मुहब्बत का यही नतीजा हो निकलेगा।

जेबु--अच्छा, आवो भई ! तुम अपनी शिकायत लेके आये हो, मैं अपनी शिकायत लेके बैठी हूँ। अब इसका फैसला किसो तोसरे के हाथ से हो नहीं सकता—हमी दोनों मिलकर अपना झगड़ा तै करडालें। तुम खड़े क्यों हो,-क्या मेरी बगल अब तुम्हे बुरी मालूम पड़ने लग गई है। ठीक है, क्यों न हो, मदनमोहनी ऐसी खूबसूरत औरत के सामने हमलोग किस खेत की मूली हैं। तिसपर—महामाया और मायादेवी की मेहर्बानी कुछ कम नहीं है।

अद्भुत--(खड़ेहीखड़े) यह सब कुछ तो तुम्ही हमेशासे कहती हुई आई हो और कहतीही रहोगी, मगर मैं तो वही हूँ जैसा तुम पहले समझती रही। आज मैं तुम्हारी वही मुहब्बतको आजमाने के लिए आया हूँ,- देखें; तुम कहाँ तक सच्ची होकर निकलती हो।

जेबु--हाँ हाँ तुम खुशी से आजमा सकते हो। मगर देखना मैं भी जीतेजी कभी कच्ची होकर न निकलूंगी।

अद्भुत---अच्छा तो सब से पहले मुझे कुमारी कनकलता को देड़ालो जो तुम अपनी बहन हुस्नबानूके यहाँ से उठा लाई हो ?

जेबु---कनकलता ! माशाअल्लाह ! कनकलता किस चड़िए!का नाम है। भई ! अद्भुतनाथ ! तुम में यही तो एक बुरी आदत पड़ी हुई है, -अगर इस आदत को छोड़ दो तो तुम आज दिन किसी रियासत के राजे महाराजे कहलावो !

अद्भुत-ठीक है, तुम्हे कुछ मालूम नहीं है। मगर मुझे तो मालूम है। मैं आपही अपनी चीजको खोज ढूँढ कर निकाल लूँगा। अच्छा, आज यहीं तक मुहब्बत की जांच हुई, कल फिर मैं तुमसे मिलूँगा।

जेबु-नहीं नहीं, तुम नाहक का कुसूर मेरे ऊपर मढकर इस तरह हर्गिज नहीं जा सकते। बैठो,-मेरे पास बैठ जावो,-मुझे समझाकर बातें कहो। इस तरह कलेजे पर छुरी भोंकना किसी मर्दको लाजिम नहीं है।

अद्भुत मैं तुम्हे समझाऊँ ? ठीक कहतीहो,-मैं तुम्हें समझाऊँगा,-अच्छी तरह से समझाऊँगा। मगर देखना कहीं समझते समझते सब कुछ समझ को न खो बैठना। कनकलता को तुम पहचानती नहीं हो,-मगर अपनी सुरङ्गवाली नम्बर पाँचकी कोठरी में किसको छिपा रक्खा है,--खैर यहभी जाने दो,- वह रास्ता मेरा देखा हुवा है,--और वहाँ से समझ बूझकर मैं यहाँ आया भी हूँ। अब रह गया बांकी तुम्हे समझाना,-वह-अब कुमार रणधीरसिंहको तुम किसी तरह नहीं पासकती। तुम्हारी मुहब्बत उनके साथ फजूल है। वे महामाया-तुम्हारी दोस्त बहूरानीके कब्जे में पहुँच चुके हैं, अब विना तिलस्म तोड़े वे वहाँ से हर्गिज न निकलेंगे। अगर

तुम्हे--देखनेका शौक होतो शौक से जा सकती हौ, मगर देखो मैं फिर भी कहे देता हूँ। तुमने इसी कम उमर में ही बहुत कुछ बुराइयां करडाली है,--अब अपने को सँभालकर अच्छे रास्ते पर चलो, नहीं तो बुरी तरह, बहुतही बुरी तरह, तुम बर्बाद होजावोगी। साथही अपनी बहन हुस्नबानूको भी सँभालो.-अभी वह बुरी राहपर पहुँच नहीं पाई है,-नहीं तो,-महारानी--स्वर्णकुमारी की तरह कौड़ी की तीन हो जावोगी। तुम्हारे साथ कोई बुराई नहीं है, हम लोगोंने बहुत कुछ किया,--सोचकर देखो कोई बात बाँकी नहीं रख्खी है,--अब सँभलना चाहिए। अब भी मेरी तरह सँभल जावोगी तो दुनिये का बहुत कुछ ऐश उठावोगी।

जेबु--(उसका हाथ पकड़ कर) तुम बैठते क्यों नहीं हौ, मैं खड़े खड़े किसी की बातें नहीं सुना चाहती।

अद्भुत--जेबुन्निसा! समझ रख्खो, मुझे अब तुम किसी तरह का धोका नहीं देसकती। मैं अब वह पहलेका अद्भुतनाथ नहीं हूँ, इन दिनो जहाँ जाताहूँ चौकन्नेका ख़ज़ाना बनकरजाताहूँ अच्छा बन्दगी! फिर कभी ऐसाही इत्तफाक हुवा तो मिल लूंगा, इस वक्त मैं बहुत ही जरूरी काम में फँसाहुवा हूँ।

जेबु--तुम इतने बेमुरौब्बत क्यों हुए जाते हो?

अद्भुत--अब वह बिगड़ने का वक्त नहीं रहगया।

जेबु--खैर, तब भी उस पुरानी मुहब्बत को याद कर घण्टे भरतो दिल बहलाते हुए जावो।

अद्भुत--मैं यहां दिल बहलाने बैठूंगा तो कुमारी कनकलताको किसके भरोसे पर छोड दूंगा।

जेबु--क्या तुम उसे छुड़ा चुके?

अद्भुत—नहीं तो क्या मैं तुम्हे वैसेही मुंह दिखाने आया हूँ ?

जेबु—(अपनेको सँभालकर) खैर,—बहुत दिनों के बाद मुलाकात भयी है। तुम्हे घण्टे भरतो मैं किसी हालात से भी नहीं छोड़ सकती। अगर तुम बेदर्दी के साथ चले जावोगे तो तुम्हे एक माशूक के कत्ल करने का अजाब लगेगा। (हीनासे) तुम जरा दरवाजे को भिडकाती हुई उस कोठरी में तो चली जावो ?

अद्भुत—(डपटकर) खबरदार! उठनेका नाम भी न लेना। यह सब धोके धड़ी की बातें अपने किसी बुद्धू यार-को समझाना। मैं बहुत कुछ समझ चुका हूँ,—मुझे समझाने का इस वक्त जरूरत नहीं,है तुम दोनो मजे में बैठी रहो,—तुम्हे यारों की कमी नहीं है। अगर तुम्हे आजके लिए कोई न मिला होतो--वही पुराने मन्शूरको भेजदूँ ? यह सुनतेही उनदोनों के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगी। तमाम बदन डरके मारे बेतकी तरह थरथर काँपने लगा। यह देख अद्भुतनाथ मुस्कुराता हुवा जिधर से आयाथा उधरही चला गया। उसके जातेही जेबुन्निसाने अपने होशको सँभाल, तेजी के साथ कमरेके बाहर निकल. पहरेदारिन लौंडियोंको पुकारा। मगर किसीने भी जवाब नहीं दिया। यह देख; वह सब बातें समझ गई, इसलिए वहां से उतर अपने एक ऐयार को बुला, सब हाल बता, सुरङ्ग के मुहाने को फौजों से रोकने का हुक्मदे, आप सीधे;—उसी कमरे में आ—हीना को दूसरी कोठरी की ओर भेज, एक आलमारी को खोल उसीके भीतर घुस गई। उसने अन्दर आतेही एक मोमी समादान को जला अपने हाथमें

लिया। इस वक्त वह हदसे ज्यादः घबड़ा रही थी। उसका पैर ठिकाने पर नहीं पड़ता था। वह तेज़ी के साथ एक ज़ीने-से उतर एक तरफ चलने लगी। चलतेचलते पन्द्र बीस मिनट के बाद वह एक बन्द दरवाज़े के पास पहुँची, वहां पहुँचतेही उसने किसी कीलको दबा दरवाज़े को खोला। उसके भीतर एक बहुत बड़ी सहन थी; उसके अगल बगल में कई एक बन्द कोठरियांथी। उसने वहाँ पहुंचतेही सबसे पहले नम्बर पाँचकी कोठरिको खोल कर देखा। अन्दर गहरा अन्धःकार छाया हुवा था,—उसके हाथ की रोशनी पहुँचतेही किसी कमसीन औरत ने—रूँधे हुए गले से कहा—हाय! बहन! मुझे तुम्हारी ओर से हर्गिज़ ऐसी उम्मीद न थी। उसकी ऐसी बातें सुनतेही इसने चौंक कर रोशनी को उसकी तरफ करके,—अच्छी तरह देखा। देखतेही उसको पहचान बड़े अफसोस के साथ उसके बदन से लपट कर कहा—मेरी प्यारी बहन! हुस्नबानू! यह तेरे साथ किसने कार्रवाईकी? इतना कहते कहते वह बेहोश होक-र वहीं लेट गई।
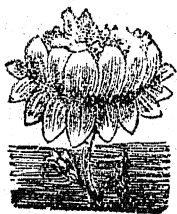
सातवाँ बयान

" जानलो,—यहहै भुलावे का महल ।
है भुलाने का यहाँ लाखों पहल " ॥
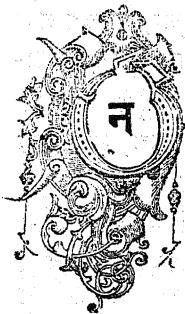
न जरिया मिलाए जाओ,-अब जाते जाते " इस सुरीले, मीठे तानको सुबह के वक्त कान में पडतेही कुमार महेन्द्रसिंह की आँखें खुली,-उन्होने चारो ओर निगाह उठाकर देखा,-मगर अपने सिवाय किसी को भी नहीं पाया। उनकी आँखें खुलतेही गाने वालेने भी अपने मनमोहन तान-को बन्द करदिया। कुमार गद्दगुदेदार पलङ्ग पर से नीचे उतर पड़े। कमरा सबतरह के सामानों से सजा हुवा-था। वे ताज्जुब भरी निगाहों से इधर उधर देख, खिड़की के पास आकर खड़े हुए। इतने ही में पीछे से किसी के पैर-का चाप सुनाइ पड़ा, वे चौंकन्ने हो पीछे घूमकर देखने लगे परन्तु किसी को नहीं देखा,-यह देख उनके ताज्जुब का ठिकाना नहीं रहा। वे इधर उधर कमरे भर घूमकर कोने कोने को टटोलने लगे। इतने ही में उनकी नज़र सङ्गमरमर के एक टेबुर पर जा पड़ी,—वहाँ उन्हो ने एक पुरजे को पड़ा हुवा देखा। उसको देखते ही उन्होने उठा कर हाथ में लिया। उसमें लिखा हुवा था—कुमार! आप इस झोपड़ी को अपनी ही समझकर निःसंकोच भावसे सब चीजों को अपने व्यवहार में लाइए? यह हिन्दू का घर है,—खाने पीने की चीजें ब्राह्मणों

के हाथ से बनी हुई होती है। बग़लके दरवाज़े का शेर वाला मूठ ज़ोर से अपनी ओर खींचना, हम्माम में जाने का रास्ता मिलजायगा। वहां अपने ज़रूरी कामों से निपट कर चले आइए, आपके लिए भोजन तैयार रहेगा। आपकी भलाई चाहने वाला भी दो एकरोज़ के भीतर आपसे मिलने आवेगा,,। इस को पढ़ कुमार को और भी ताज्जुब हुवा, वे देर तक खड़े २ कुछ सोचते रहे इसके बाद,–उसमें बताए हुए दरवाजे-को खोल, सीढ़ियों से नीचे उतर हम्माम में पहुँचे। वहाँ धोती, अगौंछा, साबुन, मञ्जन, तैल, कंघी, आइना, सब कुछ कायदे के साथ रक्खा हुवा देखा। वे सब कामों से निवृत्त हो,–उसी रास्ते से कमरे में दाखिल हुए। वहाँ आकर उन्होने उसी सङ्गमरमर के टेबुलपर उम्दः से उम्दः खुश्बूदार खाना सजा हुवा पाया। यह देख वे और भी आश्चर्य में आगए। उन्होने चारो ओर निगाह उठाकर देखने के बाद थाली की ओर देखा, उसके ऊपर ही एक परचा रक्खा हुवा पाया,–उसमें लिखा हुवा था–आप इन सब खाना को वेखौफ खाइये,अगर इसमें कोई चिजकी कमी होजावेतो लिखकर छोड़-ने के बाद कुछ देरके लिए हम्मामकी हवा खा आइएगा, आपको मिल जाएगी।

कुमार की परेशानी पलपर पल बढ़तीही जाने लगी। उन्हो-ने सोचा, यह तो अजब जगह पर आके फंसे हुए हैं,न आदमी का पता है, नकिसीको सूरतही दिखाई पड़ती है,—मगर हर तरह का सामान आपही आप आजाता है। अच्छा मैं भी इस खानेको तबतक हर्गिज न छूऊँगा जब तक इस कमरे का मालिक मेरे सामने न आवेगा। इतना सोचकर उन्हो ने ज़ोर से कहा—मैं इस खाने को अकेला कभी भी नहीं खाऊंगा, इसके जवाब में ऊपर की तरफ़से किसीके खिलखिला कर

हंसने की आवाज़ आई। उन्होंने ऊपर निगाह उठा कर देखा परन्तु किसीको भी न पाया। फिर उन्होंने कहा—चाहे जो कुछ भी हो मगर मैं तो अकेला किसी हालात से भी नहीं खासकता? इसके जवाब में किसीने बहुतही सुरीले कण्ठ से कहा—आपकी यह ज़ीद इस समय बिल्कुल बेकार है।

कुमार—तो समझ रखो यह सब खाना भी मेरे लिए एक दम बेकार है।

आवाज़—आप पहले खातो लीजिए?

कुमार—खिलाने वाले का पता नहीं, मैं अकेले भूतकी तरह बैठे हुए खाऊँ? ऐसी शिक्षा तो आजतक मुझे किसी ने नहीं दी है। न मुझ में इस तरहकी आदत ही है।

आवाज़—(हँसकर) तब तो झख मार कर खिलाने वाले को आनाही होगा?

कुमार—हाँ, यहतो सबसे जरूरी बात है।

आवाज़—अगर इससे आपका नुकसान होतो?

कुमार—मेरा जब से घर छूटा है,-तब से कौनसा ऐसा फायदा उठाया है जो आज अकेले रहने पर उठाऊँगा।

आवाज़—तो क्या मैं आऊँ?

कुमार—हाँ हाँ कहतो दिया,—नहीं तो इस थाली को ज़मीन पर पटक कर बुलताहूँ। यह सुनकर किसीके मीठी हँसी से हँसने की आवाज़ आई, साथही नकाब से मुँह छिपाए हुए किसी औरतको दरवाज़ा खोल भीतर आती हुई देखा। उसे इसतरह आतीहुई देख, कुमारने कहा—अब यहांतक तो होगया, तुम सामने भी आगई मगर नकाब से अपने चेहरे को छिपाने की कौनसी ज़रूरत बांकी रही?

नकाबपोश—अब इसके लिए तो ज़िद न कीजिए?

कुमार—मैं इसी के लिए तो ज़िद करूँगा ही।

नकाब—मैं हाथ जोड़ती हूँ, पांव पड़ती हूँ, इस बातको इस समय रहने दीजिए। बैठिये, मैं भी आपही के साथ बैठ कर कुछ खालूँगी ?

कुमार—मैं भी सब कुछ करनेके लिए तैय्यार हूँ। मगर नक़ाब उतारे बिना कुछभी नकरूँगा। काले काले चेहरे के साथ बैठ कर खाने से शरपर शैतान सवार हो जाता है ?

नक़ाब—(हँसकर) अच्छा तो आप सब कुछ करनेके लिए तैय्यार हैं न ?

कुमार—(कुछ हिचकिचाकर) हाँ, हाँ, सबकुछ करने के लिये तैय्यार हूँ।

नक़ाब—(नक़ाब उलटकर)। लीजिये,—आपभी क्या कहेंगे। अब तो जो कुछ कहूँगा वह सब विना उज्र करेंगेन ? कुमारने देखा, वह एक पन्द्र सोलह बरसकी सुन्दरी है। आज तक उनकी नज़र से ऐसी खूबसूरत औरत कभी नहीं गुज़री थी। वे उसके ऊपर मोहित होकर एकटक देखने लगे। उनको ऐसा करते देख, उस सुन्दरी ने हंसकर उनका हाथ पकड़ कुरसी पर बिठाते हुए कहा—आपको मेरे नकाब उलटने से कुछ रञ्ज तो नहीं हुवा ?

कुमार—रञ्ज ! रञ्ज किस बातका ! सच कहताहूँ सुन्दरी ! आज तक तुम्हारे बरोबरी की खूबसूरत कामिनी कभीभी नहीं देखी थी।

सुन्दरी—क्या कनकलताभी इतनी खूबसूरत नहीं है !

कुमार—उसकी बातही दूसरीहै।

सुन्दरी—(हँसकर) तो यहां तीसरी कौनसी बातहै! आप-

भी पूरे खुशामद के कोष हैं, खैर अब भोजन कर लीजिए तो फिर बातें हो।

कुमार—मैं अब जबतक तुम्हारा पूरा परिचय पा नलूँगा तब तक भोजन करूँगा?

सुन्दरी—[खिलखिला कर] यह तो आप उँगली देते हुए, पहुँचे तक निगला चाहते हैं। अब ज्यादः ज़िद मत कीजिए, नहीं तो जिद भी आपसे नाराज़ हो उठेगी! लीजिए, मैं भी इस तरफ़ बैठ जाती हूँ,-अब कुछ देरके लिए पूछताछ को ताकमें रख उदर देव को तृप्त कोजिए।

कुमार—[उसकी बातों से और भी मोहित होकर] नहीं सुन्दरी! चाहे मुझे बातों में फुसलाकर कुछ भी कहो मगर मैं एक भी नमानूँगा। तुम पहले अपना नाम बतावो; उसके बाद......

सुन्दरी—(बात काट कर) काम बतावो; ग्राम बतावो, अपना आराम बतावो, यही न। खैर आप किसी तरहसे नहीं मानतेहैं तो मैं बताने के लिए तैय्यार हूँ। मेरा नाम नारङ्गीहै,-मैं महारानी मायादेवी की एक स्नेहपात्र लौंडी हूँ। यह जगह हीरे के तिलस्म का एक टुकडा है।

कुमार-[ताज्जुब में आकर] तो क्या मैं तिलस्म के भीतर आगया?

नारङ्गी— जोहाँ,—आप आजसे नहीं, हफ्तों से तिलस्म के भीतर पड़े हुए हैं।

कुमार—कल मुझे बुलाने वाली औरत कौनथी?

नारंगी—वह भी उन्ही की लौंडीमेंसे एक थी। मगर उसकी नीयत कुछ औरही समझ मैंने आपको उसके पास

तक जाने के लिए रोक, बीचही में आपको जमीन के नीचे कर लिया ।

कुमार—उसकी नीयत क्या थी ?

नारंगी—वह थी तो महारानी की लौंडीही मगर हज़ारी-बाग़के नव्वाब नसीरुद्दिनकी लड़की जेबुन्निसासे मिली हुई थी। वह आप को फँसा कर उसी के हवाले करना चाहती थी।

कुमा—(उसका हाथ पकड़ कर) तो धन्यवाद है,—जो मैं उसके हाथ से बच कर तुम्हारे हाथ आपड़ा। यहतो बतावो,-जिस कमरे से मैं परदे की ओट होकर खड़ा हुवा था, वह तुम्हारी महारानी का कमरा था ?

नारङ्गी—जी नहीं—उनका कमरा क्या उसी मामूली ढङ्ग से सजा हुवा रहता है। वहतो हमारी ही तरहकी एक लौंड़ी-का कमरा था।

कुमार—तो फिर तुम्हारी महारानी वहाँ क्यों कर आई थी।

नारङ्गी—वह सब किस्सा मुझे मालूम है। वह मायादेवी नहीं थी। उन्ही की लौंडी चन्द्रा थी। उसने आपको महारानी बन कर धोक़ा दिया था ?

कुमार—मगर वहाँ...एक दूसरी औरत तो......

नारंगी--हाँ हाँ मैं समझ गई। आपकी कालिन्दी तो उसे मायादेवी ही बतलाती थी। मगर नहीं,-वह कालीन्दी भी आपकी कालीन्दी नहीं थी ?

कुमार—(ताज़ुब में आकर) तो कौन थी ?

नारंगी—उसी चन्दा की लौंड़ी थी। इस तिलस्म में सिवाय यहां के लोगों के और कोई आही नहीं सकता ?

कुमार—तो मैं कैसे चला आया ?

नारंगी—[हँसकर] आप अपनी खुशी से थोड़ेही चले

आए हैं। अच्छा, अब भोजन ठण्डा हो चला। इस पर भी थोड़ा थोड़ा हाथ फेरते जाइए?

कुमार—क्या बतावें, मैं तो आज कई दिनोंसे भूलभूलैय्ये में पड़ा हुवा आपही हैरान हो रहा हूँ। अच्छा, क्या तुम मुझे इस तिलस्म से बाहर करदे सकती हो?

नारंगी—हाँ, क्योंनहीं करदे सकती मगर इसके बदले में मुझे आप क्या ईनाम दीजिएगा?

कुमार—जो तुम चाहोगी।

नारंगी—अच्छा, यही बात रही। आप घबड़ाइए मत, मैं आपको दो एक रोज़के भीतर ही बाहर कर दूँगी। ख़ैर, अब भोजन कीजिए? उसके इस तरह कहने पर कुमार ने कुछ सोच समझ कर भोजन किया। नारंगी ने हाथ धुलाकर पानका बीड़ा दिया। इसके बाद उसके कहने से वे पलंग पर आकर लेटे। नारंगी एक कुर्सी खींच उसपर बैठ उन्हे पङ्खा करने लगी। कुमार पलंग पर लेटतेही सोगए। दीया जलने के बाद उनकी आँख खुली। कमरे भर में दिनकी तरह रोशनी हो रही थी। उन्होने उठकर हाथ मुँह धोया। उस समय वहाँ नारंगी नहीं थी। वे उस के लिए बेचैन होकर दरवाज़े की तरफ़ देखने लगे। इतने ही में दरवाज़े को खोल एक पचीस तीस बरस की साँवलीसी औरत ने कमरे के भीतर आ उन्हे घूरघूर कर देखने के बाद कहा—तुम कौन हो? किसके हुकमसे यहां आकर इस तरह कुर्सी पर डटे हुए बैठे हो?

कुमार—(कुछ अप्रसन्न होकर) मैं कोई भी क्योंनहूँ, मगर इसमें तुम्हारा कौनसा इजारा है?

औरत—क्यों नहीं, मैं इस कोठरी की मालिकन हूँ।

कुमार—तो तुम सवेरे से अब तक कहां थी ?

औरत—जहन्नुम में, यह सब पूछने वाले कौन होते हो ? अच्छा, अब सीधी तरह से उठो और मेरे कमरे को ख़ाली करदो ?

कुमार—मैंतो जब तक इस कमरे में मुझे बैठाकर जानेवाली औरत न आवेगी तब तक एक कदम भी इस कमरे के बाहर उठकर नजाऊँगा।

औरत—वह तुझे बैठाकर जानेवाली औरत कौन थी ?

कुमार—तुम्हारी नानी थी ।

औरत—[चिढ़कर] देख, जबान सभाल कर बातें कर नहीं तो कान पकड़ कर निकाल बाहर करदूँगी ।

कुमार—[हंसकर) कान पकड़ कर निकालने वाले हाथभी यही हैं ?

औरत—नहीं तो और कौन है शोहदे ! चल, निकल बाहर हो ।

कुमार—मैंतो विना कान पकड़े किसी तरह से भी बाहर नहीं जा सकता। इतना सुनतेही उस औरत ने गुस्से से तड़पकर तेजी के साथ उनके पास आ उनका हाथ पकड़ लिया। उसके हाथ पकड़तेही उन के तमाम बदन पर विजली की तरह झनझनाहट फैल गई, साथही वे बेहोश होकर लेट गए। जब उनकी आँख खुली तो उन्हो ने अपनेको नंगेखञ्जरोंसे सजाहुआ एक बहुत बड़े लोहेके देवके साथ बेबश हो बँधे हुए पाया। यह देख वे उससे छुटकारा पानेकेलिये हाथ पैर पटकने लगे। उनका ऐसा करतेही उस लोहे के आदमी का खञ्जर वाला दोनो हाथ उनकी तरफ़ बढने लगा, इतनेही में दो हब्शीयों को साथले सामने से वही सांवली औरत आती हुई

दिखलाई पड़ी। उसने आतेही उन की तरफ़ देख कर कहा-अब बोल, मैंने तुझे कान पकड़ कर लाया या नहीं ? एक मामूली आदमी होकर मुझसे शेखी बघारता था। उस शेखो-का नतीजा निकला या नहीं। अच्छा अगर तू मरना न चाहता होतो, बता,—तुझे किस औरतने अपने कमरे में लाकर रक्खा था ? कुमारने इसका कोई जवाब नहीं दिया। यह देख,-उसने गुस्से से तावोपेंच खाकर उन दोनो हब्शियों से कहा—बस यह हरामजादा इस तरह से नमानेगा। देवके तमाम खञ्जरों को चला दो"। यह सुनतेही दोनो हब्शियों ने लोहेके देव की दो-नो बग़ल में आ किसी खटके को दबानेकेलिए हाथ बढ़ाया।

आठवां बयान ।

"नेकियाँ करते चलो,—नेकी बनावेगी सभी ।
है नहीं बनती बदीसे बात तिलभर भी कभी" ॥

बिक्रम सिहने देखा,—एक साँवलीसी खूबसूरत औरत उनके पीछे खड़ी हो; उन्हे गौर से देख रही है। यह देख उन्होने उससे कहा—तुम कौनहो, मुझसे क्या चाहती हो ?

औरत—डरो मत, मैं तुमलोगों की दोस्त हूँ? आवो मेरे पीछे पीछे चले आवो,—तुम दोनो को कुमार रणधीरसिंह और कुमारी सावित्री का पता बता देती हूँ?

बिक्रम-यह मुझे कैसे यकीनहो ।

औरत—तुम्हे यकीन होनेका मैं बहुतही अच्छा सबूत दूँगी।

बिक्रम—ख़ैर, तो तुम यहीं क्यों नहीं बतादेता ?

औरत—ऐसे रास्ते में भी कहीं वैसी बातें हो सकती है ?

बिक्रम—क्यों नहीं होसता है, यहाँ सुनने वालेही कौनहै ?

औरत—सुनते नहीं हो, कई एक सवार आरहे हैं ?

बिक्रम—हाँ,यह तो सुनताहूँ, मगर इससे क्या होता है। हम लोग पेड़की आड़ में खड़े हैं। वे लोग दुश्मन भी होंगे तब भी हमलोगों को एकाएक देख नहीं पावेंगे ।

औरत—यह मत समझो, वे सब बहुरानी के नौकर हैं। बड़ी बडी दूरतक की गन्ध उनके नाकों में चली जाती है।

बिक्रम—अच्छा तो चुपचाप पड़ी रहो, जब वेलोग निकल जायँ तब बातें करना।

औरत—नहीं, मैं तुम दोनों को इस तरह खतरे में नहीं

छोड़ा चाहती। हम लोग जिस पेडकी आड़ में खड़े हैं, यहीं आकर वे लोग अपनी कारवाई करेंगे। अगर तुम्हे यकीन न होतो यहांसे हटकर एक दूसरे, पेड की आड़ में खड़े हो तमाशा देखलो। यह सुन, उन्होने सरलाकी तरफ देखा। उसने उसकी बातें मन्जूर करली। अन्त में तीनो उस पेड़ को छोड़ कुछ दूर जा एक दूसरे ही पेड़ की आड़में खड़ेहो देखने लगे। उन लोगों को वहाँ आए मुश्किल से दो मिनट गुजरा होगा,— एक लाश को लिएहुए पचीस तीस सवार उसी पेड़के पास आपहुंचे। उन्होने आतेही उस पेड़को धक्का दिया। साथही उसकी जड़के पास, बहुत बड़ी गोलाई को लेती हुई एक ज़मीन का टुकड़ा नीचेकी तरफ़ चली गई। इसके बाद वे सब एक-एक कर के उसी रास्ते से घोड़े सहित चलेगए;—उनके जातेही ज़मीन फिर अपने ठिकाने आकर बरोबर होगई। यह देख बिक्रमसिंह और सरलाके ताज्जुब का ठकाना नहीं रहा। उस औरत ने उनकी तरफ़ देख कर कहा—अब तो तुम्हे कुछ कुछ विस्वास होगया होगा।

बिक्रम—बहुत कुछ विस्वास होगया। मगर यहतो बतावो, वे सब उस रास्ते से कहांगए। उन्होने किसकी लाश उठाकर लाया था?

औरत—यह हीरे के तिलस्म में जाने का एक सीधा रास्ता है। वे सब इसी रास्तेसे शाम तक वहाँ पहुँच जायेंगे। यह तुम्हारी बहन सरस्वती की लाश है?

बिक्रम—(चौंक कर) मेरी बहन सरस्वती! तो उस समय तुम ने क्यों नहीं बतलादिया।

औरत—बतला ने से तुम क्या करसकते थे। अगर कुछ ज़ोर चलने का होता तो मैंही न छुड़ा लेती। उन सवारों के

पास इस समय तिलस्मी हथियार हैं, उससे अगर लड़ बैठते-तो हम लोग बातकी बातमें यमलोक पहुँच जाते। मगर घबड़ावोमत;—वे लोग सरस्वती को इस तरह तिलस्म के भीतर लेजाकर अपनी मौत बुलारहे हैं। मैं किसी न किसी तरकीब से छुड़ाही लाऊंगी। अच्छा, अब सुनो। कुमारी सावित्री तो बहुरानी की बहन मायादेवी के कब्ज़े मे चली गई है। छोटे कुमार महेन्द्रसिंहको भी उसीकी एक लौंड़ी ने अपने कब्ज़े में कर रक्खाहै। कुमार रणधीरसिंह को कुमारी किरणशशी के जरीए जेबन्निसाकी कैद से छुड़ा मैं ला रही थी, इतने ही में सुदर्शन के आदमियों ने हम लोगों को घेर किरण शशी को ले उड़ाया। उसके बाद मैं कुमार को लेकर उसे छुड़ाने के लिए गई। रास्ते में उन्हे एक जगह टिका-कर तिलस्मी हर्बा लेनेके लिए एक छोटे से तिलस्म के भीतर चली आई, इतने में उन्हे बहुरानी की एक खूबसूरत लौंड़ी ने ऐयारी कर उन्हे फँसाके लेउड़ाया, वे इनदिनों वहीं उसके कब्ज़े में पड़े हुए हैं। अब तुम दोनो—इधर की फिक्र को छोड़ सब से पहले कुमारी कुसुमलताको बचाने के लिए रेवा-चले जावो, वहाँ वह महाराज की लड़की सुकेशी के कब्जे में पड़ी हुई मुसीबत की घड़ियां काटरही है।

बिक्रम—(घबड़ा कर) क्या कुमारी कुसुलताकी भी यह हालत होगई ?

औरत—हां, उस को उसी सुकेशीने चालाकी से उड़ा मंगाया ?

बिक्रम—इस में उसको क्या फ़ायदा था ?

औरत—वह उसे अपने क़ब्जे में कर कुमार चन्द्रसिंह की मुहब्बत चाहती है।

विक्रम—अफ़सोस! इस समय हम लोगों के ऊपर पूरी ग्रहदशा आई हुई है। खैर यहाँ तक बताकर तो तुमने इतना एहसान किया, अब अपना परिचय भी देकर हमारे दिलके खटके को मिटादो।

औरत—मैं इस समय अपने बारेमें कुछ भी नहीं बता सकती।

सरला—(गौर से उसे देखकर) मैंने आपको पहचान लिया?

औरत—तुम बड़ी चालाक हो, क्यों न पहचानोगी।

बिक्रम—(सरलासे) तो मुझे भी बतादो,यह कौन हैं?

सरला—(उनके कान में धीरेसे कुछ कहकर) आप इस लिये इस समय परिचय नहीं दिया चाहती?

बिक्रम—(औरत से) माफ़ कीजिएगा, मैंने आपको बे पहचाने हुए शक की नज़र से देखा। अब आप जो कुछ भी कहें, हमलोग करनेके लिए तैय्यार हैं। यह सुन उस औरत ने प्रसन्न होकर उन दोनो को धीरे धीरे कुछ समझाया। इसके बाद तीनों वहाँसे, उसी छोटी पहाड़ी के ऊपर चढ़ने लगे। घण्टे भरतक लगातार इसी तरह से चलने के बाद ये तीनों एक लाल पत्थरों से बना हुवा मकान के दरवाजे पर पहुँचे। उस औरतने वहां पहुंचतेही, दरवाजे को थपथपाया, साथही भीतर से कौन है? कहने की आवाज़ आई। उस औरतने "जान्हवीहूँ" कह कर अपना परिचय दिया। उसके मुंह से यह शब्द निकलतेही दरवाज़ा खुला, तीनो भीतर चलेगये। सामनेही एक लम्बी चौडी कोठरी में कई एक मर्द, औरतें बैठे हुए थे। जान्हवी को देखतेही उनसबों ने झुक झुक कर प्रणाम किया। इसने उनमेंसे एक मर्द की तरफ़ देखकर कहा—जसवन्त! मेरी मेहनत इस समय बिल्कूलही बेकार गई।

मगर कोई हर्ज नहीं-जब तुम्हारे ऐसे मददगार मेरे साथ हैं तो; दुश्मनों को नीचा दिखाए बिनाकिसी तरहसे भी नरहूँगी।

जसवन्त—क्या कुमारी कनकलताका भी पता नहीं चला?

जान्हवी—उसे तो अद्भुतनाथ छुड़ाकर ला रहा है।

जसवन्त—यह बहुतही अच्छा हुवा। इधर मैंने मन्दाकिनि का भी पता लगाया।

जान्हवी—तो वह इस समय कहाँ है?

जसवन्त—स्वामी अच्युतानन्द के तिलस्मी मकान में।

जान्हवी—तब मैं उसे कलही छुड़ाकर लासकती हूँ। अच्छा, तुम भी ऊपर आवो। मैं इन दोनों के सामने ही तुम्हे कुछ समझाया चाहती हूँ।

जसवन्त—ये दोनो कौन हैं?

जान्हवी—बिक्रमसिंह और सरला।

जसवन्त—(प्रेम से बिक्रम का हाथ पकड़) माफ़ करना, मैंने बदली हुई सूरत को देख नहीं पहचाना (सरलासे) बहन सरला! तुम्हे मालूमहै या नहीं, तुम मेरी फूफीकी लड़की हो?

सरला—(प्रणाम कर) यह बड़ीही खुशी की बात सुनने में आई।

जान्ही—यह सुन कर मुझे भी बड़ी ही खुशी हुई। अच्छा अब आवो, ऊपर चले चलें। इसके बाद वे चारो एक सींढी से होते हुए एक बहुतही बड़े कमरे में पहूँचे। वह कमरा हर एक जरूरी सामानों से सजा हुवा था। वहाँ पहुँचतेही एक ग्लास उठाकर पानी पोने के बाद सब को एकएक कुर्सी पर बिठाकर आपभी जान्हवी एककुर्सी खींचकर बैठगई। इसके बाद चारों में धीरे धीरे किसी बिषय में बातें होने लगी। घण्टे भरतक उसीतरह बातें होनेके बाद जसवन्तसिंह को लेकर बिक्रमसिंह नीचे उतर किसी ओर को चले गए। उन दोनो के जाते

ही एक सत्र अठारह बरषकी खूबसूरत,गोरीसी औरतने कमरे में प्रवेश किया। उस को देखतेही जान्हवीं ने प्रसन्न होकर कहा-कहो,? दुर्गा!तुम अब तक कहां थी और कब चली आई

दुर्गा—(उसके पासही बैठकर) मैं अबतक वहीं थी,-वहीं से सीधे चली आरही हूँ।

जान्ह—तो क्या उसका पता चल न सका ?

दुर्गा—नहीं;—उसने उसको किसी तिलस्मी जगह पर लेजाकर कैद कर रक्खा है। मैंने तुम्हारे आने के बाद लाख शरपटका मगर किसी तरह से भी पता लगा नसकी ?

जान्ह—खैर—अब पता लगही जायगा, यहतो बतावो, छोटे कुमार का क्या हाल है ?

दुर्गा—वे अभीतक मायादेवी के सामने पहुंच नहीं पाए-हैं। उनके पीछे,—कुमुदिनी की प्यारी लौंडी; वही शैतान की खाला बत्सिया लगी हुई है।

जान्ह—तो क्या मायादेवी की कुमुदिनी से कुछ अन-बन होगई ?

दुर्गा—नहीं, ऐसा तो ज़ाहिरा कुछ दिखाई नहीं पड़ता; मगर बत्सियाके रंगढंग से मालूम पड़ता है कुमार को कुमु-दिनी खास अपने लिएही चुनी हुई है। वह उन्हे मायादेवी को नहीं दिया चाहती है।

जान्ह—ख़ैर वे दोनो आपस में इसी झमेले के बीचपड़कर लड़ मरें, हम लोगों को तो फ़ायदाही है।

दुर्गा—हां, है तो सही, मगर इस समय कुमार तो फेर में पड़े हुए हैं।

जान्ह—उन्हे तो इसी तरत फेरमें पड़कर तिलस्म तोड़ना ही है।

दुर्गा—(सरला की तरफ़ देख कर) क्या, कुमारी सावित्री की सखी सरला यही हैं।

जान्हवी—हां, तुमने ठीक पहचाना।

दुर्गा-मुझे इनसे मिलकर बड़ीही खुशी हुई। परसों आनन्द सिंह और चपलासे हज़ारीबाग़के पास ही भेंट हुई थी।

सरला-तो वेलाग चले कहाँ गए?

दुर्गा-मैंने उन्हे सम्भलपुरही जानेकी सम्मति देकर भेजदिया।

जान्हवी----यह भी अच्छाही किया। हां, यह तो बतावो, मेरे पीछे अच्युतानन्द वहाँ रहा या नहीं।

दुर्गा----वह कई दिनों तक वहीं पड़ा रहा--अन्तको वहाँ से जब चलने लगा तो मैं भी उसके पीछेपीछे चली आई। वह सीधे रेवा चला आया, वहां आकर वह कुमारी कुसुमलता और कादम्बिनी को अपने क़ब्ज़े में कर महारानी स्वर्णकुमारी के पास सिंघपुर चला गया। रास्ते में मैंने उन दोनोंको छुड़ाने की बहुत कुछ कोशिशकी मगर मेरा दाव किसी तरह से भी चल न सका।

जान्हवी--(कुछ सोचकर) यह बहुतही बुराहुवा,--मगर लाचारी है, क्या किया जाय। अच्छा, अब मैं अपनी रायको बदल कर सरला को साथले रेवा चली जाती हूँ। तुम आजका दिन यहीं ठहर कर सीधे कटक चली जावो।

दुर्गा--अच्छी बात है. मगर तुमने सुना नहीं, महाराज नरेन्द्रसिंह भी कई लाख फौज को लेकर कटक तक जाने के लिए चल निकले हैं।

जान्हवी----तब तो वे, सभी राज्यों को फतह करते हुए वहाँ पहुँचेंगे।

दुर्गा----[हँस कर] इस में क्या शक है। उनके साथ महारानी किशोरी भी हैं।

जान्हवी----क्या वेभी अब अपना पुराना हौसला निकाला चाहती हैं। अच्छा हुवा, उनकी अक्लमन्दी भी इस समय कुछ काम कर जायगी। इसके बाद तीनों ने भोजन किया। दुर्गा ने एक आदमी को बुलाकर दो घोड़े कसकर तैय्यार करने का हुक्मदिया। जान्हवी ने दुर्गा को जो कुछ करना था समझाकर कहा, इसके बाद सरलाको ले घोड़े पर सवार हो सिंघपुर की तरफ़ चलपड़ी। इस समय उसको बहुतही जल्द वहां पहुचना था, इसलिए बड़ी सड़क को छोड़ कर तेज़ी के साथ जङ्गलहो जंगल चलने लगी। दूसरे दिन ये दोनों घोड़े-को बढाए हुए शोण के किनारे किनारे जारहे थे. इतने में एक जगह दो औरतों को कई एक आदमियों ने मिल घेरा हुवा देखा। देखतेही जान्हवी ने कड़क कर उन आदमियों को वहां से हटजाने के लिए कह, अपने को उन दोनों औरतों के पास पहुंचाया।

नौवां बयान।

"सोचकर देना बचन, इसमें नहीं वह
बात तो है पर ठहरने की नहीं यह जात है" ॥

बहुत दिनों के बाद आज महारानी अम्बालिका को अपनी प्यारी सखी राजेश्वरी के साथ घोड़े पर सवार मधुपुर से मुंगेर की तरफ़ जाने वाली बड़ी सड़क पर धीरे धीरे जाती हुई देख रहेहैं। उसका खूबसूरत चेहरा कुछ कुछ उतरा हुवा है। वह रह रह कर लम्बी सांस लेती हुई शिर झुकाती है। राजेश्वरी भी कम परेशान नहीं है,-मगर मनही मन कुछ औरही बात सोच रहीहै। इसी तरह चलते चलते कुछ दूर पहुँचनेके बाद राजेश्वरीकी तरफ़ देख अम्बालिका ने कहा—क्या महाराज नरेन्द्रसिंह मेरी बातें मानकर मुझे अपनी पतोहू बनाना स्वीकार करलेंगे?

राजे--वे अगर स्वीकार न करेंगे तो बड़ा भारी नुकसान भी उठावेंगे।

अम्बा—नहीं नहीं, मैं उन्हें किसी तरह का नुकसान नहीं पहुँचाया चाहती। मैं हाथ जोडूँगी, पाँव पडूँगी,-अपना समस्त राज उनको चढ़ाऊँगी;-इसके वदले में केवल उनके कुमार रणधीरसिंह की दासी बनकर रहने की भिक्षा मागूँगी।

राजे—तुम तो इस समय पागल सी होकर निकल बाहर हुई हो। इतनी वड़ी शक्ति होते हुएभी तुम्हे ऐसा करना कहीं उचित है?

अम्बा—नहीं, मैं अपने प्यारे के आदमियों से लड़कर उनके चित्त को दुःखी नहीं किया चाहती।

राजे—हमारे ऐसे शौकीन फूलों को ऐसा नहीं सोचना चाहिये। आज यह भमर है तो कल को वह भमर है।

अम्बा—नहीं, अब मैं वैसे रास्ते पर कभी भूलकर भी न चलूंगी। बहुत किया, अब एकही का हाथ पकड़ कर बांकी की जिन्दगी बिताऊंगी।

राजे—तुम्हें यह सब उपदेश किसने दिया?

अम्बा—मेरे सच्चे दिल ने।

राजे—जरा बहुरानी और मायादेवी की तरफ भी तो ख्यालकर देखो?

अम्बा—मैं अब उन लोगों की चाल को बिल्कूल ही नापसंद करने लग गई हूँ।

राजे—उन दोनों ने तो दोनों कुमारों को अपने कब्जे में कर लिया है।

अम्बा—मगर तुम नहीं जानती, वे दोनों तिलस्म के नाशक हैं।

राजे—इससे क्या होता है, वे दोनों उन दोनों का रस लिए बिना कभी भी नहीं छोड़ेगी।

अम्बा—(हँसकर) तो क्या तुम समझती हो, वे दोनों इससे काफूर की तरह उड़ जायंगे।

राजे—(शर्माकर) ऐसा तो नहीं, मगर तब भी......

अम्बा—अच्छा, इन सब बातों को जाने दो। यह बतावो, महाराज के खेमें तक पहूँचने में अब कितनी देर लगेगी।

राजे—बस, अब आही गए—वह सुनो,—उस जङ्गल के भीतर से फौजों के गूंजने की आवाज आरही है। मगर

अब भी मैं कहती हूँ,तुम उनसे दबकर कोई बातें न कह बैठो।

अम्बा—नहीं राजेश्वरी ! मैं इस समय प्रेम में मतवाली हो रही हूँ। अतएव—तुम्हारी वह पुरानी बातें कुछ भी सुना नहीं चाहती। तुम घबड़ावो मत,मैं महाराज को अपने रङ्ग पर उतार कर छोड़ूंगी। इसके बाद उन दोनों में कोई बात चीत नहीं हुयी। इस समय राजेश्वरी का चेहरा कुछ उतरा हुवा सा दिखाई पड़ने लगा। दोनों बात की बात में घोड़े को बढ़ाकर जंगल के भीतर पहुँच गई। वहां पहुँच कर इन दोनों ने देखा—हजारों तम्बू, खेमें, शामियाने टँगे हुए हैं। यह देखते ही दोनों ने अपने अप ने मुँह पर नकाब डाल लिया, फाटक के चारो तरफ पहरे का सख्त इन्तजाम था। इन दोनों औरतों को आते देख कर एक हथियार बन्द सवार ने आगे बढ़कर पूछा—तुम दोनों कौन हो, कहां से आ रही हो, क्या चाहती हो?

राजेश्वरी—हम लोग महारानी अम्बालिका की सखी हैं। महाराज के पास पहुँचा चाहती हैं?

सवार—अच्छा, यहीं ठहरो, मैं खबर भेज देता हूँ। इतना कह कर उसने अपने एक साथी की तरफ देख, खबर पहुंचाने के लिए कहा। वह उसी दम वहां से बढ़कर एक तरफ को चला गया। उसके जाने के बाद सवार ने कहा—क्या तुम लोग, सुलह की बात चीत लेकर आई हो?

अम्बा—हां, करीब करीब ऐसी ही बातें हैं।

सवार—तब तो हम लोगों को खुशी मनाना चाहिए।

अम्बा—बेशक! लड़ाई झगड़े के बिना ही सब कुछ निपट जाना, नौकरों के लिए कम खुशी की बात नहीं है।

सवार—मगर यह तो बतावो, हमारे कुमार क्या अब तक तुम्हारेही यहां नज़रबन्द हैं?

अम्बा—[लम्बी सांस लेकर) नहीं, अगर वे होते तो कुछ बात ही नहीं थी। खैर, देखो वह तुम्हारा आदमी क्या समाचार लेकर आया? इतने में उस आदमी ने आकर इन दोनों को जाने देनेका हुक्म सुनाया। दोनों धीरे धीरे घोड़े को बढाकर, एक बहुत ही बड़े जरदोजी का काम किया हुवा खेमे के पास पहुँची। वहां पहुँचते ही दोनों घोड़े से उतर पड़ी। एक सिपाही ने इन दोनों के घोड़े को एक पेड़ के साथ बांध दिया। दोनों उस खेमे के दरवाजे पर पहुँची। वहां कई एक अफसरों के साथ स्वयं गदाधरसिंह पहरे पर बैठे हुए थे। उन्हें देखते ही इन दोनों ने बड़ी नमियत से झुककर प्रणाम किया। गदाधरसिंहने इन दोनों का आदर कर पूछा—तुम लोगों को महारानी अम्बालिका ने किस लिए भेजा है?

राजे—आप वे सब बातें स्वयं महाराज के सामने सुन-लेते तो बहुत ही अच्छा था।

गदा—अच्छी बात है, चलो, मैं तुम दोनों को महाराज के पास पहुँचा देता हूँ। इतना कहकर वे गिरिजा को दरवाजे पर छोड़, उन दोनों को लेकर खेमें के अन्दर चले गए। इस समय महाराज नरेन्द्रसिंह, महारानी किशोरी के साथ बैठे हुए, किसी विषय में बिचार कर रहे थे। सैकड़ों लौंड़ियाँ मोरछल, पंखा लिए हुए खड़ी थी। हर तरह के सामानों से खेमा सजा हुवा था। दरवाजे के पासही हथियारबन्द चार लौड़ियां पहरा दे रही थी। महाराज ने इन दोनों नकाबपोश औरतों को देखते ही गदाधरसिंह से पूछा—ये दोनों कौन

हैं? उन्होंने वे ही बातें कह दी। इन दोनों ने महाराज और महारानी को बड़ेही अदब के साथ झुक कर प्रणाम किया। महाराज ने उन्हें बैठने का इशारा कर पूछा—हां, तो बताओ महारानी अम्बालिका तो मजे में हैं? उन्हों ने नाहक ही हम लोगों के दिलको रञ्ज पहुँचाने का काम कर दिखाया।

अम्बा—[नकाब उलट कर] नहीं, कृपानिधान ! यह सब कहने वाले ने आप लोगों का कान भर दिया है। यही अभागिनी दासी अम्बालिका है,-इसी को लोग मधुपुर की महारानी कहते हैं।

किशोरी—(चौंककर, उसकी खूबसूरती पर मोहित होती हुई) क्या तुम्हीं महारानी अम्बालिका हो,--आवो बेटी! इधर आकर बैठो?

महाराज—[प्रसन्न होकर] तुम खड़ी क्यों हो, उनके पास जाकर बैठ जावो?

अम्बा—[हाथ जोड़ कर] दयानिधान ! आप इन्शाफ की नजर से देखिए तो मेरा कोई भी कसूर नहीं। मैंने छोटे कुमार को अपने यहां रक्खा जरूर था;—मगर अफसोस! मेरे मनकी बातें होने न पाई, वे वहां से एक जबर्दस्त आदमी के हाथ में चले गए।

किशोरी—तो बतावो बेटी! तुमने उसको अपने यहां क्यों रोक रक्खा था?

अम्बालिका—[रोकर] मैंने उन्हें कुमारी कनकलता से मिलाने के लिए रोक रक्खा था। अन्त में वह भी आ गई-थी, मगर मेरी बदकिश्मती ने उन दोनों की भेंट होने के पहले-ही दोनों के दोनोंकोही मेरे हाथ से छीन लिया। मैं इसी सेवा के बहाने, एक दूसरी ही बात चाहती थी।

किशोरी—[उसे अपने पास बिठाकर] वह कौन सी बात थी ?

अम्बा—(शर्माकर) मेरा दिल बड़े कुमार के ऊपर......

किशोरी—(बात काट कर) अब कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है; मैं समझ गई । यह तुमने बहुत ही अच्छा सोचा था ।

अम्बा—मैं आज शरम को तिलाञ्जली देकर आप लोगों के पास उनके चरण की भिक्षा मांगने आई हूँ। यह राज आप लोगों का है, यह दासी आप लोगों की है, इसकी तमाम दौलत, फौज, जर, जवाहिरात आपही लोगों की है, मगर इसके बदले में मैं केवल आप लोगों की पतोहू का आसन चाहती हूँ ।

महा—कहो गदाधरसिंह ! यह वचन इन्हें इस समय कैसे हम लोग दे सकते हैं ?

गदा—जी हां, कुमार का मिजाज दूसरे ही ढंग का है । वे ऐसे विषय में किसी का कहा नहीं मानते ।

किशोरी—नहीं बेटी ! तुम घबड़ावो मत, मैं उसे मना-ऊँगी । उसे मानने के लिए हर तरह से जोर दूँगी ।

अम्बा—(हाथ जोड़कर) बस, मैं यही चाहती हूँ, यदि ऐसी बातें हो जाय तो इसकी यह जिन्दगी, इसकी तमाम चीजें आपके पावों में समर्पण कर आपही की लौंडी हो जिन्दगी गुजारूंगी । मैं इससे बढ़कर—और तमाम दुनियाँ की चीजों को नहीं चाहती हूँ । आप बड़ी हैं, आप समझदार हैं, आप दयालु हैं, आप अगर ऐसा कहती हैं तो अवश्य मेरी मुराद पूरी हो जावेगी । मैं आपको इसके बदले किस मुंह से धन्यबाद दूँ ?

महाराज—(किशोरी से) तुमने कह तो दिया, मगर अपने लड़के के मिज़ाज से भी वाकिफ़ हो ?

किशोरी-हां, क्यों नहीं, अगर मैं उसे जोर दूँगी- अवश्य जोर दूँगी तो मेरी बातें टाल नहीं जायगा। हर तरह से मानेगा, मान जायगा। उसने आज तक मेरी बातें कभी टाली नहीं है।

महा—यह तो तुम जानो या वह जाने, मैंतो इस बारे में कुछ कह नहीं सकता।

अम्बा—[हाथ जोड़कर] आपको इस तरह इस शरण में आई हुई एक अबला के ऊपर बे मुरौवत होना उचित नहीं है। आप अगर कुमार को ज़ोर देंगे तो वह अवश्य मान जायंगे।

महा—ऐसी ऐसी बातों में एक समझदार, स्याने लड़के को ज़ोर देना मुनासिब नहीं पड़ता। खैर—तुम मेरे पास आगई हो—इसलिए मैं उसको उसके आने के बाद एक मर्तबः कहला दूँगा,-अगर उसने उचित जवाब देकर मेरा मुँह बन्द कर दिया तो मैं दुबारा फिर कुछभो न कहूँगा।

अम्बा—खैर— इतनी बात तो मैं पा गई,—यही बहुत है, आगे जैसी तकदीर होगी मैं अपने को देख लूंगी।

किशोरी-तुम निश्चिन्त होकर जावो,-मैं जहाँ तक हो सकेगा तुम्हारी मदद करूँगी। मुझ से किसी का रोना देखा नहीं जाता।

महा—ठीक है, मगर सच्चा वादा करके फिर पछताना पड़े तो ?

किशोरी-ऐसी खूबसूरत,-धनी,-एक जबर्दश्त रियासत की रानी को पाते हुए भी यदि वह मञ्जूर न करेगा तो,—

अपनी तकदीर को ठोकेंगे। खैर इस वक्त इन सब झगड़ों से क्या फायदा, सही सलामत लड़का आजाय तो फिर इसके बिषय में बातें करेंगे।

अम्बा—मैं उन्हें वहां से जल्द ही छुड़ाकर लो आऊँगी।

महा—अगर तुमने ऐसा किया तो, हम लोगों को जोर देने की आवश्यकता भी न पड़ेगी। वह स्वयंही तुम्हारे ऊपर रीझ जायगा।

गदा—हां, अगर आप ऐसा कर सकें तो, हम लोगों को कहने की भी जगह मिल जायगी।

अम्बा—मैं अवश्य ऐसा करके दिखाऊँगी। मैं इस कामके लिए आजही यहां से रवाना भी हो जाऊँगी। साथ ही छोटे कुमार, कनकलता, और सावित्री को भी छुड़ा लाऊँगी। तब तक आप लोग यहां न ठहर कर मेरे ही झोपड़े पर जाकर रहते तो बड़ाही अच्छा हाता।

महा—तुम इसके लिए तो जोर मत दो, हम लोग अब यहां से सीधे हजारीबाग चले जाते हैं।

अम्बा—मैं अपनी फौज को भी आपके साथ कर दूंगी।

महा—इस समय तो मुझे अपनी फौज से विशेष और सहायता की आवश्यकता नहीं है, मैं इतनी फौज से हज़ारी-बाग फतह कर लूँगा।

अम्बा—तो मेरी बेकार पड़ी हुई फौज किस दिन काम आवेगी। आपने अगर इस छोटी सी बात को मञ्जूर न किया तो मैं समझूंगी मेरे इस तरह आने का आपके ऊपर कुछ भी असर न पड़ा।

गदा—[नरेन्द्रसिंह से] तो हर्ज ही क्या है, आपकी फौज अगर साथ ली जायगी तो,-करीब के रहने वाले होने

की वजह से—हम लोगों को हर तरह का सुभीता भी पड़ जायगा।

महा—खैर, इसके विषय में मैं फिर बात चीत कर लूंगा।

अम्बा—इतनी बातें तो आपको अवश्य स्वीकार करनी-ही होगी।

किशोरी–तो आप इतना भी कहने के लिए क्यों आना-कानी कर रहे हैं। किसी के दिलको दुखाना अच्छा नहीं होता, आप न जाने क्या सोच रहे हैं,--मेरी समझ में कुछ भी नहीं आता। इसके जवाब में नरेन्द्रसिंह कुछ कहा ही चाहते थे–इतने में एक चोबदार ने आकर अर्ज किया—बाहर एक मदनमोहनी नामकी औरत,--खड़ी हो सरकार से मिलना चाहती है" उसका नाम सुनते ही अम्बालिका तो कुछ कम, मगर राजेश्वरी तो बहुत ही घबड़ाई, उसके चेहरे पर हवा-इयां उड़ने लगी, वह अपने को किसी तरह से भी संभाल न सकी, जोर से चिल्ला कर बेहोश हो लम्बी पड़ गई।

दशवाँ बयान

" अब जमाना वह नहीं, यह भी नहीं वह भी नहीं।
सूख जाता पेड़ जब है, फल नहीं देता कहीं॥

सिंघपुरके एक बहुत ही बड़े महल में, एक सजे-सजाए कमरे के अन्दर स्वामी अच्युतानन्द के साथ महारानी स्वर्णकुमारी को बैठे हुए देख रहे हैं। समय तीसरे पहर का है। दोनों के सामने गुलाबी रंगकी शराब से भरा हुवा शीशे का ग्लास रक्खा हुआ है। इन दोनों के अलावे इस समय वहां और कोई नहीं है। दोनों कुछकुछ नशे में चूर हो बातें कर रहे हैं। बातें करते २ स्वर्णकुमारी ने कहा—तुम तो भई! अपना ही मतलब निकालने की तरफ दौड़ा करते हो। कभी भूलकर भी मेरे कामकी ओर तुम ख्याल नहीं किया करते हो, इसीसे तो मुझे उतने बड़े तिलस्म से हाथ धोकर एक मामूलीसा क़स्बा बसाकर, इसतरह रहना पड़ा। अगर तुम्हे मेरी कुछ भी मुहब्बत होती—तुम कुछ भी मेरा ख्याल करते तो क्या आज दिन मेरी मुराद पूरी होकर मैं सुखसे न समय गुज़ारती।

स्वामी—यह सब कुछ ठीक है; मगर तुम भी तो सोच सकती हो कि मैं उस समय कैसे कैसे फेर में पड़ा हुवा था। मुझे दम लेने तकको फुर्सत नहीं थी। अगर मैं ज़रा भी अपने

काम से हटता तो आज दिन गली गली ठोकरें खाते फिरता, मगर तिस पर भी मैंने तुम्हारी क्या मदद नहीं की ?

स्वर्ण-कुछ भी नहीं किया, अगर करते तो मेरी यह दशा काहेको होती। देखो,-मैंने तुम्हे क्या नहीं किया,-अपना सर्वश्व दिया। हीरेके तिलस्म में पहुंचाया, दारोगा का प्रिय पात्र बनाया। उस हैसियत तक पहुँचने की तदवीर बता दी, उसके बदले में तुमने एक मर्तब, एक मामूली सी मदद कर दी.--वह भी इत्तफ़ाक़ से—तो क्या इसी से तुम अपना एहसान मेरे ऊपर पटकते हो ?

स्वामी—नहीं नहीं, यह बातें नहीं है (एक घूंट पीकर) मैं ही तुम्हारे एहसान के नीचे दबा हुआ हूँ-मगर—ख्याल तो करो...।

स्वर्ण-(बात काटकर एक घूँट पीती हुई) मैं सब कुछ ख्याल कर चुकी हूँ, मुझे अब ख्याल करने की कोई आवश्यकता नहीं है, मर्दकी ज़ात बड़ी ही बेमुरौव्वत होती है,—खैर तब न सही अब सही, कुछ भी तो मेरी मदद कर दिलकी लगी को पूरी करदो।

स्वामी-(हँसकर) क्या अब तक भी तुम्हे-तुम्हारे जीमें वही पुरानी अर्मान भरी हुई है। छोड़दो,—उन सब झन्झटों को छोड़कर आनन्द के साथ बैठ, अपने समय को खुशी खुशी बीतने दो।

स्वर्ण-तुम दूसरे को तो ऐसा कहा करते हो, मगर अपनी ओर ज़रा भी नहीं देखते। क्या यही इन्सानियत है? चाहे तुम मदद करो चाहे न करो, मैं तो जीते जी उसको कभी भुलाही नहीं सकती। करूँगी, अवश्य करूँगी, बिना पूरा किए उसको कभी न छोडूँगी। दिलमें लगी हुई बात एक न एक दिन बन-

कर आती ही है। आज मैं सालों से उसका ध्यान किए बैठी हुई हूँ। उसी के लिए तिलस्म को हाथ से गँवाया तो क्या ईश्वर मेरी एक भी न सुनेगा ?

स्वामी—तुम्हारा कहना ठीक है,-मगर नरेन्द्रसिंह क्या इस बातको कभी मञ्जूर करेंगे,-अगर उन्होंने मञ्जूर किया तो हमलोगों के दिल बहलाव की ऐसी अच्छी जगह फिर कहाँ रहजायेगी···

स्वर्ण-यह चोंचला तो तुम अपने पासही रहने दो ? तुम्हारे लिए किस बातकी कमी है । महामाया, मायादेवी अम्बालिका, भुवनेश्वरी, जेबुन्निसा......

स्वामी-(बात काटकर) बस बस यह निसा फिसाकी बातें इस नशा के समय मत करो। तुम्हारे दिल में अभी तक वही चाह बांकी होतो,-मैं पूरी कोशिश करके एक मर्तबः नरेन्द्रसिंह को तुम्हारे पास लादूंगा ।

स्वर्ण—अगर तुमने ऐसा कर दिया तो मैं तुम्हारी हमेशा के लिए लौंड़ी बन जाऊँगी। मुझे जिन्दगी उनके साथ गुजारने की नीयत नहीं है,-जीके बुखार को मैं केवल एकहीं मर्तबः मुलाकात कर निकालूंगी ।

स्वामी—अच्छी बात है,—मैंने यही सोचकर तो कुमारी कुसुमलता और कादम्बिनी को तुम्हारे कब्जे में लाकर रख छोड़ा है। नहीं तो क्या मुझे रखने का और दूसरा ठिकाना नहीं था ?

स्वर्ण—यह तो तुमने ठीक कहा। मगर...

स्वामी—अब यहाँ मगर तगर मत लगावो। मैं इस तरह अपना भी मतलब निकाल लूंगा,—तुम्हारा भी काम बना-

दूँगा। अच्छा, अब कहो तो एक मर्तबः कुसुमलता से भेंट कर आऊँ ?

स्वर्ण—ऐसे रंग के समय तुम मुझे छोड़े जाते हो ?

स्वामी-मैं छोड़ क्यों जाऊँगा,—मैं ज़रा उसकी थाह लेकर तुरन्त ही चला आता हूँ।

स्वर्ण—तो मैं भी तुम्हारे साथ साथ चलती हूँ।

स्वामी—इस से ज़रा औरही बात न पड़जायगी।

स्वर्ण—तुम इस समय मुझे इस हालत में छोड़कर एक नई कली के पास दिल बहलाने जाया चाहते हो। ख्याल करो. ऐसी कौन औरत होगी जो अपने आनन्द पर लात देकर अपने प्रेमी को किसी और के पास भेज देने का कलेजा रक्खेगी। अगर तुम्हारे पास से कोई ऐसी अवस्था में अपनी प्रेमिनी उठकर चली जाना चाहे तो क्या तुम खुशी से जाने दोगे ?

स्वामी-नहीं, मैं कैसे उसे जाने देता ?

स्वर्ण-तो फिर मेरे लिए क्यों ऐसा कहते हो। क्या तुम दूसरे ही सांचे से ढले हुए हो और मैं दूसरे ही साँचे से ढली हुई हूँ। क्या मुझमें तुम्हारी तरह लालसा नहीं है,—क्या मेरे इन्द्रिय सब अपने कर्तव्यों से शून्य होरहे हैं।

स्वामी-यह तो नहीं है, मगर मैं क्या कहूँ तुम्हारे सामने कुछ कहते नहीं बनना है।

स्वर्ण-कैसे बने, जब कुछ बननेका हो तो बने भी,—क्या तुम्हे इसके अलावे मिलने का और दूसरा वक्त नहीं है ? क्या रेवा से यहां तक आते आते तुमने उसके दिलकी थाह नहीं ली ?

स्वामी-तुम भी कैसी बातें करती हो। रेवा से यहां तक वे दोनों बेहोश होकर आई हैं या अपने होश में।

स्वर्ण—खैर यह भी मैंने मान लिया मगर इस समय तो मैं तुम्हे वहां जाने हर्गिज नहीं दूंगी। मर्दों में मुरौव्वत नहीं होती। मर्दों में विवेक नहीं होता। मर्दों में दया नहीं होती।

स्वामी--तो क्या औरतों ही में यह सब कुछ होती है।

स्वर्ण--क्यों नहीं, क्या इसके लिए दूसरा प्रमाण भी देने की आवश्यकता है? इसके जवाब में अच्युतानन्द कुछ कहा-ही चाहता था इतने में--बगल का एक बन्द दरवाजा बड़े ज़ोर के साथ खुला और उसमें से जान्हवी ने निकल इन दोनों के पास आ, कड़क कर कहा -बस बस,--तुम दोनों की शैतानी-का खातमा अब हुवाही चाहता है। देखो,- मेरी ओर देखो, यह तिलस्मी खञ्जर मैं किसी दूसरे के लिए नहीं उठा लाई-हूँ। अगर तुम दोनों अपनी बिहतरी चाहते होतो कुमारी कुसु-मलता और कादम्बिनी जिस कमरे में बन्द है,--उसकी ताली मेरे हवाले कर दो? नहीं तो देख लाली! तूभी कुछ क्षण के बाद अपने दिलकी अर्मानों को लेकर किसी दूसरी ही दुनियां में चली जायगी। तू भी बंशिया! अपने पाजीपने को लेकर दोजखकी हवा खाने जायगा। बोलो,--बोलते क्यों नहीं हो। दूसरे की बहू बेटी को बर्बाद करना,--दूसरे मर्दों को बिगाड़ना क्या सहल हिसाब से हज़म होसकता है? उसकी ऐसी बातें सुन दोनों के दोनों घबड़ा उठे, किसी के मुंह से चूँ तक आ-वाज़ न निकली। अच्युतानन्द का तो एक मर्तबः उसके साथ पाला पड़ चुका था, इसलिए वह और भी ज्यादा घबड़ा उठा। स्वर्णकुमारी उसको अच्छी तरहसे नहीं जानती थी इसलिए उसने अपने दिलको कुछ ही क्षण में मजबूत कर; तकीए के नीचे से तमञ्चा निकाल उसकी तरफ निसाना साध कहा--बस, ज़रा भी आगे बढी नहीं,--यह तेरी छाती को

फोड़, तुझे ज़मीन पर सुलादेगी उसकी ऐसी बातें सुन,--मुस्कुराती हुई जान्हवो कुछ आगे की ओर बढ़ी, स्वर्णकुमारी ने तमञ्चेका फैर किया। गोली सनसनाती हुई जा उसके बदन में गीली मिट्टी की तरह लग, चिपटा होकर नीचे गिर पड़ी। यह देख स्वर्णकुमारी के होश पैतरे होगए,—उसके हाथ से तमञ्चा गिर पड़ा, वह बेतकी तरह कांपने लग गई। अच्युतानन्द का तो अजब हाल होरहा था, वह उतने बड़े तिलस्म-का दारोगा होकर भी उसकी समझ में नहीं आती थी की वह क्या करे। इतने ही में जान्हवी ने आगे बढ़,-स्वर्णकुमारी की बग़ल में पड़ा हुवा तालियों का गुच्छा उठा लिया और साथही धीरे से कुछ कह दिया जिसको सुनतेही वे दोनों के दोनो घबड़ा कर बेहोश होगये।

ग्यारहवाँ बयान ।

" बुलबुल न भूल अब तू—गुल में जहर भरा है ।
फन्दा बना बनाकर वह सामने धरा है ॥ "

कुमार रणधीरसिंह ज़मीन के नीचे पहुँचते न पहुँचते बेहोश हो गए, उनको तनो बदन की ख़बर न रही। जब उन्हें होश आया तो उन्होंने अपने को,-एक निहायत ही सजे-सजाए कमरे में,—एक गुदगुदेदार पलङ्ग के ऊपर पड़े हुए देखा। उन्होंने अपने तमाम बदन को टटोल कर देखा मगर कहींभी किसी तरह की चोट लगी हुई नहीं पाया। वे धीरे से उठ बैठे,-उनको उस समय की बातें एक-एक कर याद आने लग गई। कमरा बहुत बड़ा था, चारो ओर बहुतसो खिड़कियां थीं। वे उठकर एक खिड़की के पास चले आए और झाँककर नीचे की तरफ देखने लगे। सामने एक बहुत बड़ा बगीचा था। उसमें कई एक खूबसूरत खूबसूरत औरतें फूल चुन रहो थीं। जगह जगह फौवारा छूट रहा था यह तीन मञ्जिले के ऊपर खड़े थे। इन्होंने देखते देखते-एक ऐसी औरतको देखा जिसको देखकर यह अपने को संभाल न सके,-नीचे उतरने के लिए दरवाज़ा खोजने लगे। मगर एक भी न मिला। अन्तमें उन्होंने अपनी कमर से कमरबन्द निकाल,-खिड़की के सहारे बांध नीचे उतरना चाहा। मगर वह चौथाई दूर तक भी न पहुंचा। यह देख वे कमरे भरमें

कहीं कुछ डोरी के मिलजाने की आशा से खोजने लगे परन्तु कोई चीज़ ऐसी नही मिली.-जिससे इनका काम निकले, इस लिये लाचार हो,-उन्होंने उस खिड़की पर आ-उस औरतकी तरफ़ देख ज़ोरसे कहा--सावित्री ! मैं तुम्हारेपास आनाचाहताहूँ मुझे नीचे उतरने का रास्ता बतादो ? इनकी यह आवाज़ सुन जितनी औरतें थीं सबको निगाह इनके ऊपर उठ गई। सावित्री ने भी देखा,--देखतेही तेजी के साथ दौड़ एक कुञ्ज में जा गायब हो गई। उसे ऐसा करते देख इन्होंने--ख्याल किया--वह इन्हीं के पास आती होगी। मगर घण्टे भर तक आसरा देखने पर भी न वह उन्हीं के पास आई, न फिर वहीं दिखलाई ही पड़ी। धीरे धीरे और सब औरतें भी अलग अलग कुञ्ज में जाकर ग़ायब होगई। यह देख इनकी परेशानी का कुछ ठिकाना नहीं रहा। इन्हों ने बन्द दरवाजे को खोलनेकी बहुत कुछ कोशिश की मगर किसी तरह से भी न खोल सके,--अन्त में लाचार होकर एक कुर्सी खींच उस पर बैठे भी नहीं थे, इतने में बगल ही का एक दरवाज़ा खुला और उसमें से एक निहायत ही ख़ूबसूरत औरत ने निकल इनके पास आ बड़ी नर्मियत से कहा—क्या आपको किसी चीज़ की ज़रूरत है ?

कुमार–हां, क्यों नहीं,–मैं कभी से कई चीज़ की ज़रूरत के लिए परेशान हो रहा हूँ।

औरत—तो यह लौंडी उन्हीं सब ज़रूरतों को पूरी करने के लिए हाज़िर हुई है।

कुमार–सबसे पहले तुम कौन हो, यह मुझे जानने की ज़रूरत है।

औरत--मैं महारानी महामाया की सखी इन्दुमती की एक नाचीज़ लौंडी हूँ। मेरा नाम रामा है।

कुमार--तो यह कौनसी जगह है !

रामा--यह हीरेका तिलस्म है। यह मकान हमारी स्वामिनी इन्दुमती का है।

कुमार--तो क्या मैं हीरे के तिलस्म में चला आया? यह तो असम्भव है। कहां बलिया,कहां कटक? अच्छा यह तो बतावो, मैं किस हालात में यहां आपहुँचा था, मुझे कौन, कहाँ से उठा ले आया ?

रामा--यह सब बातें तो यह लौंडी कुछ नहीं जानती है मगर हां,--आज सवेरे ही मुझे आपके आजानेकी खबर लग गई थी।

कुमार---अजब मामला है? खैर तुम्हारी मालिकनी इस समय कहां हैं ?

रामा--वे महारानी के पास चली गई हैं। आज उनके साथ रहने की उन्ही की पारी है। इसी लिए तो इस लौंडी ने आपके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त कर पाया है। अब जैसी आज्ञा हो, उस तरह यह दासी सेवा करने के लिए तैय्यार है।

कुमार—तुम बड़ी समझदार मालूम पड़ती हो। अच्छा यह तो बतावो,—जिस समय मैंने खिड़की से बगीचे की ओर झांका था, उस समय तुए वहां थी या नहीं ?

रामा—जी नहीं, कब की बातें आप कर रहे हैं। मैं तो मालिकनी को महारानी के महल में पहुँचा, सीधे इस समय चली आ रही हूँ।

कुमार—तब तो तुम न होगी। मगर वे सब......

रामा—(बात काट कर) आपने किस खिड़की से किस बगीचे की तरफ झांका था?

कुमार—(हाथ से बताकर) मैंने उस खिड़की से उस बगीचे की ओर देखा था।

रामा—तब तो वह बगीचा हमारी मालिकनी का नहीं है। आपने बिलासवती की लौंडियों को देखा होगा।

कुमार—बिलासवती कौन है?

रामा—बहूरानी की बारह सखियां हैं, उनमें से हमारी मालिकनो की तरह वह भी एक है।

कुमार—तब तो तुम वहां का हाल अच्छी तरह से बता सकती होगी।

रामा—जी नहीं, हम लोगों का आना जाना सिवाय महारानी के महल से और कहीं होता नहीं है। इस लिए उनके महल का हाल हम लोग नहीं जानते- हमारे महल का हाल वे सब भी नहीं जानने पाते।

कुमार—[सोचकर] तब तो तुमसे पूछना ही फजूल है मगर क्या तुम कोशिश करके एक बात का पता लगाकर ला दे सकती हो?

रामा—आज्ञा कीजिये,—जहां तक मुझसे हो सकेगा, मैं उस सेवाके करने से बाज़ न आऊँगी।

कुमार—मैंने उस बगीचे में बहुत सी कमसीन, हसीन औरतों के साथ कुमारी सावित्री को भी देखा था, अतएव तुम उसे भेंट कर किसी तरह से भी मेरे पास उसका समाचार ला देसकती हो?

रामा—आपने उस बगीचे में कुमारी साविंत्री को देखा

था, नहीं, हर्गिज नहीं,—आपको धोका दिया गया। मैं इसी समय उन्हें बहूरानी के पास बैठी हुई देखकर आ रही हूँ। यह कैसे हो सकता है, वे उस बगीचे में आही नहीं सकती। होशियार हो जाइए,—आपके ऊपर कोई दुश्मन जरूर चक्र चलाया चाहता है।

कुमार—तो क्या मैं इस समय भी किसी के चक्र से बचा हुवा हूँ।

रामा—नहीं, आप बड़ी हिफाजत की जगह पर हैं। यहाँ आप किसीके चक्र में फँसे हुए नहीं हैं। अगर यहां से किसी दूसरी जगह चले जायंगे तो आपका निकलना कठिन ही नहीं बल्कि असम्भव हो जायगा।

कुमार—क्या यहाँ, कोई महामाया की सखी चन्द्र-प्रभा भी है।

रामा-जीहां है, वह भी बाह सखियों में से एक सखी है।

कुमार-वह अभी इसी तिलस्म के भीतर है?

रामा—यह तो मैं ठीक नहीं कह सकती, मगर उसको आप कैसे जानते हैं?

कुमार—किसी तरह से जानते हैं,-मगर क्या तुम उससे भेंट करा दे सकती हो?

रामा—(लम्बी जबान निकाल कर) राम राम! ऐसा नामभी न लीजिएगा। अगर हमारी मालिकनी यह बातें सुन पावेंगी तो,इसी दम मेरी बोटी बोटी काट कर रख देंगी।

कुमार—अच्छा, यह न सही,-मुझे बहुरानी के पास तक तो ले जा सकती हो। अगर वहाँ तक पहुंचा दोगी तो मैं तुम्हें बहुत सा ईनाम दूँगा।

रामा—यह भी मुझ से नहीं हो सकता है।

कुमार—[खिन्न होकर] तब तो तुम्हारे हाथ से कुछ भी नहीं हो सकता है।

रामा—[हँसकर] क्यों नहीं हो सकता है। मैं पांव दबा सकती हूँ, तेल मालिश कर सकती हूँ, नहला सकती हूँ, पंखा कर सकती हूँ, चिलम भरके ला सकती हूँ, खाना खिला सकती हूँ, कपड़ा पिन्हा सकती हूँ, झाड़ू लगा सकती हूँ...

कुमार—बस बस, मैं समझ गया. तुम लम्बी चौड़ी बातें भी कर सकती हो।

रामा—नहीं, इसके अलावे मैं गा बजा भी सकती हूँ।

कुमार—खैर इस समय मुझे इन सब बातों की जरूरत नहीं है। तुम चली जावो,-मैं इस समय अकेले पड़े रह कर अपने छितराए हुए विचार को इकट्ठा किया चाहता हूँ।

रामा—पहले आप नहा धो, नित्य कृत्य से निवृत्त हो कुछ भोजन कर लीजिए, तब अकेले में रह कर जो कुछ सोचना हो सोच लीजिएगा।

कुमार—मैं इस समय कुछ भी न करूँगा। मेरा चित्त अनेक विचारों से चञ्चल हो उठा है।

रामा—तो आप इस तरह क्यों घबड़ाते हैं, हमारी मालिकनी आवेगी तो उन्हीं से सब कुछ कहना, सुन्ना। वे आपकी सब बातों को कर देंगी। करने का उपाय बतावेंगी।

कुमार—मैं यह सब कुछ नहीं चाहता। यदि तुम कर दो तो, मैं तुम्हें हर तरह से प्रसन्न करूँगा। जिन्दगी भर तुम्हारा एहसान मानता रहूँगा।

रामा-अगर मैं जो कुछ भी करूँ, मानने का वादा करें तो मैं उद्योग को लड़ाकर देख लूँ।

कुमार-(उसका हाथ पकड़ कर) हां, जरूर तुम्हारी

बातों को चाहे कैसी भी क्यों न हो, अवश्य मानूंगा इसके जवाब में रामा कुछ कहा ही चाहती थी मैं इतने धड़ाके के साथ एक दूसरा दरवाजा खुला, और साथही हाथ में चमचमाता छूरा लेकर चन्द्रप्रभा आती हुई दिखलाई पड़ी। उसे देखतेही रामा घबड़ाकर भागा चाहती थी इतने में उसने दौड़कर इसे पकड़ लिया और-कुमार की तरफ देखकर कहा-आप जल्द ही जिस रास्ते से मैं आई हूँ उसी रास्ते से चले जाइए। कुमार उसकी बातें सुन उठा ही चाहते थे,-इतने में कई एक हथियार बन्द लौंडियों को साथ ले एक निहायतही हसीन कमसीन औरत आती हुई दिखलाई पड़ी उसे देखतेही चन्द्र प्रभाने कड़ककर कहा—देख, इन्दुमती! तूने शैतानी पर कमर कसा है। अब मैं किसी तरह से भी बर्दाश्त नहीं कर सकती।

इन्दु—(गुस्से से तनकर) तो तू मेरा क्या करलेगी?

चन्द्र प्रभा—क्या करलूँगी-यह सबतो मैं पीछे बताऊँगी पहले अपनी शरारत का बदला तो यह ले? इतना कहकर उसने जल्दी से एक गोले को जमीन पर पटका। पटकतेही-तोपकी सी आवाज देता हुवा वह गोला फटगया,-साथही उसमें से बेहिसाब धूवां निकलकर कमरे भरमें फैल गया। उस धूवें से कुमार अपने आपको भी नहीं देखने लगे। इसके बाद-उसी अन्धःकार में किसी के लड़ने की आवाज आने लगी। कुमार घबड़ाकर इधर उधर टटोलने लगे। इतनेही में किसी जबर्दस्त हाथ ने इनको पकड़कर खींचा, खींचतेही इनके बदन पर कँपकँपी पैदा होने लगी। साथही किसी दूसरे हाथ ने इनकी नाक के पास कोई चीज लाकर रक्खा जिसके रखतेही ये बेहोश होकर उसी कुर्सीपर गिरपड़े।

बारहवाँ बयान

"क्या करूँ, रोकूँ,—दबाऊँ किस तरह से आहको
छिप नहीं सकती छिपाऊँ कब तलक मैं चाहको"

आज बहुत दिनों के बाद जयदेवको सम्भलपुर के पासही-एक रमणीय तालाव के किनारे शर झुकाए हुए बैठे देख रहे हैं। इनका चित्त इस समय बड़ेही विचार में पड़ा हुवा है। यह रहरहकर शर उठा चारो ओर देखते हैं। तालाव के चारो ओर करीने से पेड़ लगे हुए हैं। नीचे उतरने के लिए बड़ोही खूबसरती से पत्थर की सीढियाँ बनी हुई हैं। चारा कोने में छोटे २ बुर्जभी बने हुए हैं। कई एक चबूतरे भी निराले ढंग से बनकर तालाव की शोभा को दूनी कर रहे हैं। जल में सैकड़ों हंस क्रीड़ा करते हुए दिखिलाई पड़ते हैं। खिले हुए कमलों पर भौंरे लोट रहे हैं,—परन्तु जयदेव का चित्त सब बातों में न लग छटपटा रहा है। मिनट २ पर अपने विचारों में लौलीन हो तनो बदन तक को भूल जाते हैं। इनको इसतरह यहां बैठे घण्टे भर से कुछ ऊपर हो चला परन्तु उनकी चिन्ता किसी तरह से भी न घटी,—अन्त में घबडाकर उठ खड़े हो-ये आपही आप कहने लगे—अफसोस! अबमैं अपने चित्तको किसी तरह से भी सँभालने लायक नहीं रहगया। एकही झलक में-फकत एकही झलक में उसने मुझे अपने काबू में कर लिया। अब क्या मैं खाक़ ऐयारी करूँगा? मुझे लोग क्या कहेंगे मैं अब किस काम का लोहा समझा जाउँगा। दोनो कुमार

दोनो हरामजादियों के फेर में पड़कर तिलस्म के भीतर चले गए हैं। विक्रमसिंह का पता नहीं है। जीवनसिंह की खबर तक नही मिलती है, सरस्वती और कालिन्दी भी न जाने कहाँ कहाँ टकरा रही हैं। माधवी चाची भी भूलभुलैय्ये में फँसी हुई चक्कर मार रही है। मैंभी एक जगह फँसकर-एक दयावान की मेहरबनी से निकल आया,—मगर निकलतेही हजरत इश्क ने मुझे भी धर दबोचा। अब इससे गला छुड़ाने का कौन उपाय है? नहीं,—कोई भी नहीं है। जहाँ प्रेम देवकी नजर पडी वहाँ उपाय लगही नहीं सकता? तब फिर मैं कैसे अपने को सँभालकर-काम में जान लड़ा सकूँगा? बस—होगया सब कुछ, मुझे अब उस लुभावनी सूरत, उस जादूभरी आँखों के अलावे और कुछ सूझताही नहीं है। अगर मैं—दो चार रोज ऐसाही हो रहूँगा तो मुझसे बढ़कर दगाबाज, बेईमान निमकहराम और संसार में कोई भी न होगा। कहाँ,-कुमार को छुड़ाने के लिए आया था,—कहाँ आपही आकर कभी न छूटने वाले फन्दे में फँसगया। परमात्मा! तू मुझे क्या ऐसाही बनाए रक्खेगा? नहीं, मुझे बलदे, मुझे धैर्य्य दे, मुझे इस प्रेम की तरंग से उतार दे,—मैं तिलस्म में घुसूँगा, दोनो कुमारों को छुड़ाने की कोशिश करूँगा,—उसके बाद जब उन दोनों को राजी खुशी मुंगेर में पाऊँगा,-तब जाकर मुझे जो कुछ बनाना हो खुशी से बना डालना। मैं भी उस समय जो कुछ तुझे बनाने की इच्छा होगी बड़ी खुशीसे बनकर रहूँगा।

सोचकर हम कुछ चले थे,-आज कुछका कुछ हुवा।
रंग बेढ़ब होगया, अन्दाज कुछका कुछ हुवा॥

इसी तरह आपही आप बहुत कुछ बकते झकते वे एक बुर्ज के ऊपर आकर बैठ गए। उनका चित्त और भी उद्विग्न

हो उठा,-रह रहकर ठण्डी सांसे निकलने लगी। उनको इस हालत में रहते हुए पन्द्रह बीस मिनटभीन वीता होगा, बगल की ओर से एक निहातयही हसीन, कमसीन, जड़ाऊ गहनों से लदी हुई औरतने निकल,इनके पास आकर कुछ मुस्कुराते हुए कहा—देखो,-तुम इस तरह बेचैन होकर क्यों अपने को घुलाए जाते हो। अपने तड़पते हुए दिलको अपने कब्जे में रक्खो,—होश को सँभाल कर बेहोशीको पास तक फटकने न दो,-ईश्वर विवेक की रस्सीको हमेशा फैलाया करता है,—वह अगर सब्रके साथ काम लोगे तो जरूर मुरादकी गाँठमेंअ-पने को फँसाकर दुःखकी नदियों में से खींच,-बचाव के किनारे पर पहुंचा देता है। तुम मेरी ओर ताज्जुब भरी निगाहों से मत देखो,—मैं तुम्हारे देखने के काबिल नहीं हूं;-अगर तुम नहीं मानते,—मुझे देखतेही जाते हो तो,—उठो खड़े हो, अपने आपेमें आजावो, मैं जो कुछ कहती हूँ उसको मानो, मान जावो.—फिर एक मर्तबः नहीं दश मर्तबः देखा करो? उस औरत की ऐसी विचित्र बातें सुनकर जयदेवका होश ठिकाने आगया,—वे उन सब रञ्जोंको भूलकर उसकी ओर गौर से देखने लगे। वह औरत वास्तव में बहुतही खूबसूरत थी, उसकी दिल लुभाने वाली चितवन को देखकर कोई भी अपने को सँभालने का ताव नहीं रख सकता था। उन्हे अपनी ओर गौर से देखते हुए देख उस औरत ने हँसकर कहा—सुनो,—मैं कहती जाती हूँ तुम सुनते जावो। मैं बहुत ही पुराने ज़माने की औरतों में से एक औरत हूँ। मैं देखने में तो सोलह सत्रह बरस की दिखलाई पड़ती हूँ.—मगर नहीं,—मैं लगभग नौ हज़ार नौसै निनान्सौ बरस की हूँ—मेरे सामने महाराज शान्तनुने गंगासे शादीकी, भीष्म पैदा हुए,—सत्य-

वती का झगड़ा आखड़ाहुवा,—भीष्मकी कड़ी प्रतिज्ञा हुई विचित्रवीर्य्य की मौत हुई। धृतराष्ट्र और पाण्डुने संसार में अपना पैर रक्खा,-कौरव और पाण्डव में तनातनी हुई। कृष्ण ने लगाम खींची,-जबर्दस्त घोड़े मैदान में उतरे,-परीक्षित जनमेजयभी अपने अपने समय में जाते रहे। विक्रम हुए, चद्रगुप्त हुए,—वे हुए, यह हुए, अन्त में तुम हुए, हम हुए,- यहां आकर इस समय इकट्ठा भी हुए-अतएव संसार ऐसाही है इसके लिए—इस तरह इस समय बेचैनी की बूटी पीकर तुम अपने को बदहोशी की तरङ्ग में मत बहावो। मैं भी एक मर्तब नहीं—इतने दिनों के बीच में—सैकड़ों, हज़ारों, लाखों मर्तब इश्क के कूवें में अपने को डाल चुकी हूँ.—किसी किसी समय तो मेरा इश्कही खाना था, इश्कही सोना था, इश्कही उठना था, इश्कही हँसना था, इश्कही बोलनाथा,-मगर कुछ नहीं,—नतीजे में मैंने बर्बादी के अलावे और कुछ भी नहीं पाया, तुम भी इस समय इश्क के पुतले हो रहे हो,—मैं यह नहीं कहती हूँ की नहो,—मगर समझ बूझ कर हो।

जयदेव बड़ेही मसख़रे थे,-परन्तु इस समय उसकी ऐसी बातें सुन वे भी दङ्ग होगए,-उनका मसखरापन हवा होगया। वे उसकी बातों का जवाब दिए बिना,-मनही मन कुछ सोचने लगे। उनको ऐसा करते देख उस औरतने उनका हाथ पकड़ कर कहा—देखो,-अब मेरी ओर देखो,-मगर किसी बुरी नीयत से मत देखो। मैं बूढी हूँ तुम जवान हो। ऐसी हालत में जिस तरह से देखना होता है उसी तरह से देखो। इस अविस्वासी संसार में जितनों ने जिसको जिस ढंग से देखा,—उतनो ने वैसाही फल पाया। मैं बहुत पुरानी हूँ.—मैंने बड़े बड़ेसे लेकर छोटे तक को देखा है। सबकी नशनश मालूम होगई है। मैं

कहीं भी किसी काम को बिना सोचे समझे करती नहीं हूँ। मैंने देखा,—तुम एक बडे भारी महाराज के ऐयार हो,—ऐयार में भी खुशमिजाज, दिलदार हो,—परन्तु तकदीर के हेर फेर से इस समय एक औरत के इश्क में गिरफ़्तार हो,—इसी लिए तुम्हे बचाकर,—जिस काम की राह में तुम आगे बढते हुए आरहे थे, उसी में लगाने के लिए आई हुई हूँ, तुम परेशानी को तो हाथ धोकर छोड़ दो, बेचैनी को जहन्नुम में जाने दो,इश्क को भाड में झोंक दो,— इसके बाद तुम सब फिक्रों से अलग हो जावोगे, तब आईने की तरह साफ बन कर तिलस्म के भीतर चले जावो । जितनी बातें तुम्हे मैंने बताई,—वह भलाई को छोड़ बुराई की नहीं है । अब जिस रास्ते से आई हूँ,--उलटे पांव उसी रास्ते से चली जाती हूँ। हाँ, साथही एक बात तो तुम्हे कहना भूलही गई थी,- तुम तिलस्म के भीतर जावोगे कैसे ? सुनो,--इसतरफ घूमकर देखो,--अपनी नाककी सीध पकड़ कर चले जावो,-एक छोटी सी पहाड़ी में एक छोटी ही सी पगडंडी मिलेगी, - उसीको-अपनी सच्ची आंखोंसे पहचान कर अपना पैर रखो,—पहाड़ की चोटी पर एक झोपड़ी पावोगे,-वह झोपड़ी नहीं, तिलस्म की खोपड़ी है,—तुम जानते हो हो,—जब खोपड़ी पर आदमी सवार होता है तो बहुत कुछ कर गुजरने की ताक़त रखता है,—बहुत कुछ कर भी गुजरता है। तुम भी उसपर सवार हो जाना,-मगर.—झोपड़ी के ऊपर मत सवार होना,--उसके अन्दर घुसकर,-एक बन्द दरवाजे को अपने खञ्जर की नोक से खोल डालना.—वह तुम्हारे,-नहीं नहीं खञ्जर से डरकर तुरन्त ही खुल जायगा। उसके खुलते ही तुम्हे नीचे उतरने के लिए एक सीढी मिलेगी, तुम बेधड़क नीचे उतर कर जिधर-

रास्ता मिले उधरही चलदेना। फिरतो घण्टे भरतक परमात्मा परमात्मा कहते हुए तुम तिलस्म की सुहावनी सरजमीन में पहुँच जावोगे।

जयदेव—तुम तो एक अजीब औरत मालूम ! पड़ती हो

औरत—मुझे तुम अजीब कहते हौ,-बड़े ताज्जुब की बात है। अगर मैं अजीव होती तो जीवकी तरह कैसे बातें करती

जय—नहीं नहीं, मेरा कहने का मतबल तुम समझी नहीं ?

औरत—शायद् ऐसाही हो। मगर इस समय को छोड़-कर मेरे साथ ऐसी ऐसी फाल्तू बातों का इस्तेमाल न करना मुझे जिस बात से नफरत होजाती है, वह कभी भी पसन्दमें लानेका बिचार नहीं होता।

जय—बड़ाही आश्चर्य है।

औरत—अभी क्या, आगे चलकर तुम्हे औरभी आश्चर्य्य होगा। यह जगत आश्चर्य के साथ बना है,-यहां जितने पदार्थ हैं सब आश्चर्य ही के हैं, अगर ऐसी हालतमें तुम्हे आश्चर्य हुवा होतो कोई आश्चर्य की बात नहीं है।

जय—मेरी अक्ल आज मेरा साथ छोड़ रही है।

औरत—क्या तुम्हे यह बात अभी मालूम हुई,—अजी हज़रत ! तुम्हारी अक्लने तुम्हारा साथ छोड़े हफ्तों होता है,—बल्कि महीनों,वर्षों कहे तब भी बेजा नहीं हो सकता है। तुम रञ्ज मतहाना,-रहेतो अकलमन्द मगर किसीकी नुकीली आँखोंने इस समय तुम्हारी अकल को थकना चूर बना डाला है,-तुम अकल के साथ बहुत पिछड़े हुए हो। अच्छा, अब मैं अपना रास्ता नापती हूँ.-तुम मेरे बताए हुए रास्ते की कमर तोड़ते हुए जावो। याद रखना,-फिर किसी रसभरी आंखों

के प्यासे न बनजाना। अभी तुम्हे बहुत कुछ करना है,-बहुत कुछ करके अपने को ऐयारों में एकही बनाना है।

जय—अच्छा, यहतो बतावो, इसमें तो कोई शक नहीं है, तुम जरूर ऐयारा हौ,-मगर कौनहौ, किस नामसे याद कियी जाती हो ?

औरत—(हँसकर) तो क्या तुम फिर मुझसे मिलना चाहते हो ? मैं अब तुमसे न मिलूंगी,-इस समय मिलना था मिली,-अब मुझे मिलना नहीं है। आदमी जब मिलते हैं तो बिछड़ते भी हैं। मैं एक मर्तवः मिली बस होगया। अब मिलने जुलने का नाम मत लो।

जय—मैं फिर मिलने के लिए तो तुमसे कुछ कहता नहीं हूँ।

औरत—तुमने साफ शब्दों में न कहा हो मगर नाम पूछने का मतलब क्या निकलता है। अगर न मिलना होता तो मेरा नाम पता क्यों पूछते ? तुम इन सब बखेड़ों को तो दो किनारे रख,—अपना काम देखो,-अपनी अकल लड़ावो, कोशिशों से बाज न आवो, हिम्मत को दिन दूनी रात चौगुना करके बढ़ावो। मिलना जुलना तो लगाही है, लगाही रहेगा।

जय—(हँसकर) तुम्हारी ऐसी औरत भी आजतक मैंने कभी न देखी होगी।

औरत—खैर इसी के बहाने तुम्हारे चेहरे पर रञ्ज के बदले हंसी तो खिलखिला उठी। मेरा काम होगया,—मैं अब खुशी से तुम्हे अपना नाम बता सकती हूँ. बताऊँगी। तुम अब एक नाकीस फिक्र में मत डूबो। हँसो, बोलो,-जैसी जैसी बातें आपड़े उसको बर्दास्त की ढालो से रोको। गम में जो आदमी पडा रहता है उसके हाथों कुछ भी काम नहीं होता

है। सुनो—मेरा नाम बनलताहै,—मैं इसी बन की लता हूँ, मेरा पता ठिकाना अगर कोई जानना चाहे तो इसी सरोवर के किनारे आवे, मैं अक्सर यहीं रहा करती हूँ। यहीं मिलूँगी, तुम्हे कभी मुझसे मिलना हो तो बनलता के नाम से यहीं चले आना। अब मैं तुम्हारा प्रणाम लेकर तुम्हे नमस्कार करती हूँ।

जय—ठहरो ठहरो,-तुम जाती कहां हो ? जब तुमने मुझे तिलस्म में जाने का रास्ता बता दिया तो,—मेरे लिए कुछ कष्ट सहकर तिलस्म के भीतर तक भी पहुंचादो।

बन—(हँसकर) साथही यह भी क्यों नहीं कहते की दोनो कुमारों को भी छुड़ाकर लादो !

जय—(झेंपकर) नहीं नहीं यह बात तो नहीं है।

बन-तो फिर कौन सी बात है। क्या तुम्हे अकेले जाते डर लगता है। अगर डर लगता है तो कहो मैं तुम्हारा साथ देने के लिये तैय्यार हूँ-अगर शक मालूम पड़ता होतो कहो, साफ तौरपर कहदो, मैं तुम्हारे शक को जड़ बुनियाद से फेंक दूँ।

जय-पहिली बात तो नहीं, मगर करीब २ दूसरी बात तो मेरे दिल में झलक मारती हुई मालूम पड़ती है।

बन-तो ठीक है, मैं इसको इसी दम दूर किए देती हूँ। देखो, तुम्हारा नाम है जयदेव मेरा नाम है बनलता,—तुम कुमार की खोज में आए हो, मैं तुम्हारी खोज में आई हूँ। तुम किसी की नजर से घायल हो, मैं भी घायल नहीं तो बीमार जरूर हूँ। तुम्हरा तिलस्म से काम है, मेरा भी तिलस्म से सम्बन्ध है। तुम उसे तोड़ने की कोशिश में हो,-मैं उसे हरा भरा बनाने की फिक्र में हूँ। तुम मर्द हो, मैं औरत हूँ। तुम्हारे दिल में शक है मैं शकको तोड़ने

वाली हूँ। तुम जल्दीही घबड़ा जाते हो, मैं कभी अपने को घबड़ाहट में नही डालती हूँ—तुम बनौवे से नफरत करते हो मैं उसे प्यार करती हूँ। अच्छा देखो,—यह मेरी सूरत असली सूरत नहीं है,इसके ऊपर झिल्ली चढी हुई है। मैं इसे उतारती हूँ—तुम देखते हुए जावो-मगर—याद रखना, न चौंकना, न घबड़ाना, न हँसना, न पीछा करना। इतना कह-कर बनलताने अपने चेहरे परसे एक बारीक झिल्ली उतार कर अलग करदी। उसके उतारतेही उसकी सूरत में बहुत कुछ फर्क आगया, जिसको देखतेही जयदेव के मुँह से एक हल्कीसी चीख निकल पड़ी,-वे अपने को किसी तरह सँभाल न सके, तेजी के साथ उठकर बनलता की ओर झपट पड़े। वह इस बात से होशियार थी। उन्हे अपनी ओर इस तरह झपटते हुए आते देख पीछेकी तरफ उछलकर धम्मसे तालाब में कूद पडी। उसे ऐसा करते देख जयदेव भी उसी के पीछे तालाब में कूद पड़े।

तेरहवां बयान

" निकालो खोजकर उनको, मुझे कुछ आज कहना है।
यहाँ तो जिन्दगी भर इसतरह से रोज रहना है" ॥

समय ने सन्ध्या का पल्ला पकड़ चुका है। दिन-करकी लालिमा भर आसमानमें छाई हुई दिखलाई पडती है। चिडिये अपने २ बसेरे के पास आकर मडरा रहेहैं। ऐसे समय महारानी मायादेवी अपने खास सोने के कमरेमें अकेले टहल रही है। चारो ओर बिजुली के झाड़ फानूस कन्दीलें जल रहे हैं। उसकी तेज रोशनी में कमरा जगमगा रहा है। हर एक खिड़कियों में जरदोजीके कामका परदा लटक रहा है। दरवाजे के बाहर कई एक हथियारबन्द लौंडियाँ पहरेपर मुश्तैद हो इधर उधर टहल रही हैं। मायादेवीका खूब सूरत चेहरा कुछ चिन्तित सा दिखलाई पड़ता है। वह आध घण्टेतक सोचसागरमें डूबे हुए उसी तरह टहलकर एक टेवुल के पास चौंकको खींचकर बैठगई। उसका चित्त चञ्चलहो उठा उसने टेवुल के भीतर से कागज, कलम, निकाल कर कुछ लिखना चाहा,—मगर दोही चार हरूफ लिखकर फिर गौरमें पड़गई। पांच सात मिनटतक उसकी अवस्था ऐसही हो रही अन्त को चौंक कर उसने कलम उठाई। कुछ लिखा, लिखने के बाद उसको लिफाफे में बन्दकर सील किया ही चाहतीथी, इतने में दरवाजे का परदा उठाकर तीस बरस के करीब की

एक निहायत ही खूबसूरत औरतने कमरेके अन्दर पैर रक्खा। मायादेवीकी निगाह उसके ऊपर पड़ी,-उसको देखतेही इसके चेहरे पर खुशी की रेखा दिखलाइ देने लगी। इसने बड़ीही प्रसन्न होकर कहा—अहा! मालती! तुम बड़े वक्त पर आ पहुँची, मैं इस समय तुम्हे ही याद करती थी। आवो, आवो यह देखो,—यह चिट्ठी तुम्हारे ही नाम लिखकर मैं भेजनेवाली थी,—बताओ, तुम कैसे इस सभय यहां चली आई? उस की ऐसी बातें सुन,-उसके पासही एक कोंच पर आकर बैठने के बाद मालती ने कहा—महारानी! मुझे आपकी हरवक्त फिक्र लगी रहती है। मगर क्या करूं,-मुझे समय बहुत कम मिलता रहता है। कभी इधर लगी रहती हूं कभी उधर लगी रहती हूं। कभी उसको बनाने के फेरमें पड़ती हूं, कभी इसको बनाने के फेर में पड़ती हूं। आप उन्हे तो जानती ही हैं। महीनों में एक घण्टे के लिएभी मिलने का अवकाश नहीं पाते हैं। हजरत दारोगा साहेब ने तो कतई छोड़ही दिया है। वे अपने ऐश में मश्त रहते हैं। उनको किसी ओर की कुछ खबरही नहीं रहती है। मेरी जानकी सांसत पड़ रही है। आज मेरे कानों में कुछ ऐसी भनक पड़गई जिससे विना आपके पास आए मेरी तबीअत किसी तरह से भी नहीं मानी, इसलिए इस समय हजारों काम का भी छोड़कर चली आई।

माया—वह कौनसी बात तुम्हारे सुनने में आईथी, जिससे तुम्हे इस तरह मेरे पास तक आना पड़ा?

मालती—क्या तिलस्म के नाशक महेन्द्रसिंह के ऊपर आपकी तबीअत चली हुई है?

माया—हां, मैं उन्हे हार्दिक दिल से चाहती हूं।

मालती—इसका परिणाम भी आपने अच्छी तरह से सोच लिया होगा?

माया—क्यों नहीं, मैं जहाँतक समझती हूँ,—इसे दोनों तरफ़ की भलाई ही है।

मालती—ठीक है, दोनों ओर की भलाई है,–मगर साथही बुराई भी बहुत कुछ है।

माया—मैं तो इस में बुराई का नाम तक भी नहीं देखती, अच्छा, तुमही बताओ–अगर तिलस्म नाशक तिलस्म तोड़ेंगे तो किस किस हिस्से को तोड़ेंगे?

मालती—जिस जिस हिस्से में खतरनाक चीजें होंगी उसी उसी हिस्से को तोड़ेंगे,–मगर इससे तो तिलस्म की कूव्वत बिल्कुल ही जाती रहेगी। फिर इसको कोई काहेको मानने चलेगा?

माया—ठीक है,–यह तुम्हारा कहना भी बेमुनासिब नहीं है परन्तु क्या तुम अपने दिल में इस तिलस्म का इसी तरह कायम रहे रहना ही पसन्द करती हो। इसके ईजाद करने वाले की बातों को उड़ा देना ही चाहती हो?

मालती—चाहती तो उससे भी बढ़कर थी मगर अपने चाहने से होताही क्या है?

माया—बस बस,–अब तुम बहुत कुछ अपने रास्ते पर चली आई हो। सोचो—यह तिलस्म आजका नहीं,–सैकड़ वर्ष पहले का बना हुआ है, बनाने वाले ने उसी समय टूटने का दिन और तोड़ने वाले का नाम तक भी लिख दिया है। हम लोग इस धरोहर के केवल रक्षक हो चले आए हैं। अब तुम्ही बतावो जिसकी अमानत हो, वह अगर लेने आवे तो क्या देने से इन्कार कर दिया जाय?

मालती—मैं सब कुछ समझ गई,-आप अब उन वुजुर्गों के लिखे हुए समय को टालना नहीं चाहती हैं। परन्तु यहतो बताइए—क्या उन बनाने वालोंने तिलस्म नाशक के साथ तिलस्म के रक्षकों को मुहब्बत करना भी लिख दिया है?

माया—क्योंनहीं-सोचकर देखो,—हर जगह उन्होंने साफ शब्दों में लिख दिया है कि अगर तिलस्म नाशक आवे-तो तिलस्म रक्षक उन्हे अच्छे बर्ताव से रक्खें, उन्हे तकलीफ देनेका इरादा भी न करें। जहांतक होसके तिलस्म तोड़ने में उनको हर तरह की मदद दें। इससे क्या तुम मुहब्बत करने की बात अपने दिल में नहीं ला सकती हो?

मालती—(प्रसन्न होकर) शाबास महारानी! शाबास! मैं आपकी बातों से इस समय बहुत ही प्रसन्न हुई। अकलमन्दों को ऐसा ही बिचार करना चाहिए। अब बताइए,—इस दासी को आप इस समय क्यों याद करती थीं?

माया—यह मैं पीछे बताऊँगी,-पहले यह तो बताओ, तुम्हे कुमार महेन्द्रसिंह का कहीं पता लगा है?

मालती—नहीं,—अभी तक तो नहीं लगा है,-मगर बात की बात में लग सकता है। क्या आप से और उनसे अभी तक भेंट नहीं हुई है?

माया—नहीं,-इसी से तो मैं तुम्हे याद करती थी?

मालती—वे तो तिलस्म के भीतर आ चुके हैं न?

माया—हाँ, कई हफ्तों से,-मगर मैं तिलस्म की रानी होकर भी किसी तरह से उनका पता नहीं पाती हूँ। मैंने इस के लिए कोई कोशिश उठा न रक्खी,—परन्तु लाचार, मुझे मन मारकर रह जाना पड़ा।

मालती—छोटी महारानी कहाँ हैं ?

माया—वे तो इस समय अपने महल में हैं ?

मालती—उनकी मुहब्बत आपके ऊतर इन दिनों कैसी है?

माया—उसी तरह की है,-मगर तुम यह सब बातें क्यों पूछती हो ?

मालती—(धीरे से) मुझे उनके ऊपर कुछ शक हो आता है ।

माया—ऐसा तो,—जहाँ तक मेरा विश्वास है वे न करेंगी ।

मालती—ऐसी भूल में आप हर्गिज मत भूले रहिए। आजकल का जमाना बड़ाही टेढ़ा आ गया है। इस में लोग,—अपने मतलब के लिए जो कुछ भी नकरें वह थोड़ा है। अच्छा, कोई हर्ज नहीं, मैं उनसे भी मिलूँगी। देखें, वे किस ढङ्ग की बातें करती हैं। मगर आपको एक काम करना होगा ।

माया—वह क्या ?

मालती—कुछ दिन के लिए आप उन्हे यहीं छोड़ कर कटक चली जाइए। मैं छिपे छिपे तौर पर यहां रह कर सबकी थाह लिया करूंगी।

माया—मुझे इस समय कटक जाने के लिए मत कहो ?

मालती—क्यों, इस में हर्जा ही क्या है ?

माया—(धीरे से कुछ कह कर) मैं इस लिए इस समय वहां नहीं जा सकती। अगर यह बात न होती तो मुझे किसी तरह का इन्कार नहीं था।

मालती—खैर तो मुझे अब दूसरे ही ढङ्ग से चलना पड़ा,

घबड़ाइए मत,-मैं आपके दिलवर को किसी न किसी तरह खींच कर आप की बगल में ला लेटाऊंगी।

माया—जिस दिन तुम ऐसा कर गुजरोगी उस दिन मैं तुम्हें जान से बढ़ कर मानूंगी। अच्छा, लो-(ग्लासभर कर) एक घूंट तो पी जावो?

मालती—(पीकर) मुबारक हो,-मगर क्या उस रस को लूटने वाले अकेले अकेले ही होंगे?

माया—(खिलखिलाकर) क्या उसके लिए और किसी की तबीअत भी मचल उठी है? कोई हर्जा नहीं,-मैं जब जाऊंगी तो-दलाली में जो कुछ हिस्सा देना दिलाना होता है वह पहले देकर ही खाऊंगी।

मालती—हां, यह तो बताइए,—इधर कभी दारोगा बाबा आए थे।

माया—हां, आए थे,—मगर एक काली सी औरत का लात घूँसा खाकर यहां से दुम दबाते हुए चले गए। [उस किस्से को बताकर] अब मेरी जान में जल्दी इधर लौटने का नाम नहीं लेंगे।

मालती—वे जैसा कर्म कर रहे हैं वैसा फल भी पा रहे हैं। अच्छा अब मुझे जाने की इजाजत दीजिए।

माया—तुम तो बहन से मिलने वाली न थी?

मालती—जोहां,—मैं उधर ही से मिलती हुई जाऊंगी। कल आधीरात के बाद मैं आप से मिलने के लिए इसी कमरे में चली आऊंगी। आप बे फिक्र रहिएगा,—आपकी मुराद पूरी हो जायगी।

माया—यह मुझे पूरा विश्वास है।

मालती—क्या बहूरानी भी कुमार रणधीरसिंह के ऊपर आशक हुई हैं?

माया—(हंसकर) हां, उधर का भी यही हाल है। उधर भी कुमार तिलस्म के भीतर पहुंच कर गायब हुए बैठे हैं।

मालती—चलिए अच्छा ही हुआ, एक की जगह पर दो हुए। अच्छा, अब मैं जाती हूँ,—मगर ख्याल रखना, अपनी सखियों के साथ भी इन सब बातों का जिक्र कभी भूल कर न करना। मुझे उन लोगों के ऊपर भी बहुत कुछ शक है।

इसके बाद मालती उठ कर जाया ही चाहती थी इतने में बगल की ओर कुछ खटका हुआ. साथही, किसी काले बोरके से तमाम बदन को छिपाए हुए एक आदमीने निकल मालती-का हाथ पकड़ कर खींचा, वह उसके पकड़ते ही जोर से चिल्ला उठी। मायादेवी ने टेबुल के ऊपर रक्खे हुए तमञ्चे को उठाकर उसके ऊपर फैर किया। मगर उस बोरकेवाले ने उसकी कुछ परवाह न कर उसे घसीटते हुए एक खिरकी की तरफ ले जाना चाहा। मालती भी अपने को ताकत में एकही लगाती थी मगर उसकी भी उसके सामने कुछ न चली-वह घसीटती हुई जाने लगी। मायादेवीने ताली बजा कर लौंडियों को बुलाया। वे सबके सब एक साथही अन्दर चली आई। बोरकेवाले को किसी भी बातों की परवाह न थी, वह निडर हो मालती को घसीटतेही जारहा था। इतने में मायादेवी के इशारे से सभी हथियार बन्द लौंडियों ने उसके ऊपर हमला कर दिया। वह एक हाथ से सबका वार बचाते हुए मालती को घसीटने लगा। उन लौंडियोंमें से कई एक लौंडियों ने मालती के पैर को पकड़ कर अपनी ओर खींचा,-मगर वह उसके हाथ से छूट न सकी। अन्त को वह

बोरकेवाला लड़ते भिड़ते, उसको घसीटते हुए दीवार के पास पहुँचा, वहाँ पहुँचते ही उसने एक दीवारगीर को पकड़ कर खींचा,-जिसके खींचते ही एक टुकड़ा ज़मीन नीचे की ओर झुल गई उसके झुलते ही मालती के साथ,-वह उसी के अन्दर चला गया। ये सब ताज्जुब में आकर एक दूसरे का मुंह देखने लगे।

चौदहवां बयान

" देखलो तुम रङ्ग सब कुछ,-पर न भूलो रङ्ग में।
रङ्ग वह लेगा बनाकर,-अन्त अपने ढङ्ग में॥ "

कुमार रणधीरसिंह की आंख खुलते ही उन्हों ने अपने को एक मुलायम गद्दे पर सोया हुआ पाया। समय रात का था। दीवट पर एक टिमटिमाता हुवा दिया जल रहा था। कमरे की लम्बाई चौड़ाई पांच हाथ से ज्यादः न थी, कोने पर एक छोटी सी झन्झरी रक्खी हुई थी। एक दरवाजे को छोड़ और कोई दरवाजा नहीं था। गद्दे के बगलही में एक नकाबपोश औरत बैठी हुई पंखा कर रही थी। कुमार ने सरसरी तौर पर इन सब चीजों के देखने के बाद गद्दे पर बैठ कर उससे पूछा—तुम कौन हो,—यह मकान किसका है?

नकाब—(धीरे से) मैं कौन हूँ? मैं खुद अपने को भी नहीं पहचानती हूँ इसलिए यह बता भी नहीं सकती। रह गया मकान,-वह मकानदार से दर्याफ्त करने पर मालूम हो सकता है।

कुमार—(हैरान होकर) तो क्या यह तुम्हारा मकान नहीं है।

नकाब—यह मेरा मकान? अजी साहब! मैंने तो अपनी जिन्दगीमें कभी अपने मकान होने का स्वप्न भी नहीं देखा है।

कुमार—तो तुम किस के हुक्म से यहां बैठी हुई मुझे पंखा कर रही थी।

नकाब—किसी के हुक्म से भी नहीं,—मैं सन्ध्या को एक जगह सोई हुई थी,—जब मेरी आंख खुली तो मैंने देखा,—इस कमरे में इस गुदगुदेदार गद्दे के ऊपर,—ठीक आपकी बगल में मैं सोई हुई हूँ। यह देख मैं सरक कर यहां आ बैठी और अपने स्वाभाविक चालसे,—पंखा हांकने लग गई।

कुमार—क्या तुम कहीं पंख हांकने का काम करती थी।

नकाब—नहीं तो,—मगर मैं स्वयं अपने को हांका करती थी इसीलिए यहां भी उसको सामने पाकर हाथ को हिला बैठी।

कुमार—तुम अपने मुंह से नकाब तो हटावो?

नकाब—नहीं, मैं नकाब नहीं हटा सकती।

कुमार—क्यों,—इसमें तुम्हारी हानि ही क्या है?

नकाब—नहीं, हानि तो कुछ नहीं है, मगर तौ भी मै नकाब को हटा नहीं सकती। मुझे देख कर...

कुमार—हां हां कहो, रुकती क्यों हो?

नकाब—रुकती तो नहीं हूँ मगर डर लगता है।

कुमार—क्यों, कैसा डर लगता है?

नकाब—डर यही लगता है कि कहीं औरों की तरह आप भी मेरे मुंह को देख मजनू न हो जायं। फिर तो मुझे पीछा छुड़ातेही नाकों दम हो जायगा।

कुमार—(हँसकर) नहीं नहीं, मैं तुम्हे देख कर आशक न होऊंगा।

नकाब—आप के कहने का बिस्वास ही क्या। आप तो अपने को खूब संभालेंगे मगर मेरी सूरत तो आपको संभलने

नहीं देगी। हमने आपके ऐसे बड़े बड़े समझदार को अपनी मोहनी छटा से बेकाबू कर डाला है। सैकड़ों का दिल मसल कर रख दिया है। आप भी इसको देख कर इसके अदा से कभी बच कर जा नहीं सकेंगे।

कुमार—अच्छा यही सही,-मगर एक मर्तब तो नकाब उलट कर अपने चांद का दर्शन करा दो?

नकाब---नहीं,--यह जिद आप न कीजिए,--आपके ऐसे बड़े बड़े जिद करने वाले मेरे मुंह को देख कर बर्वाद हो चुके हैं, अतएव आप भी बर्वाद हो जायंगे।

कुमार—तो क्या मेरे बर्वाद होने में तुम्हें कुछ शक है?

नकाब—मुझे आपके बर्वाद होनेका हाल क्या मालूम? क्या आपकी यह हालत बर्बादी की है?

कुमार—नहीं तो, क्या तुम बनी हुई हालत समझती हो?

नकाब—समझती तो कुछ औरही थी, मगर खैर आपने कहा तो मैंने भी माना,-परन्तु अब फिर आप क्यों इससे भी अपनी गई बीती हालत बनाने के लिए उतावले हो रहे हैं।

कुमार—इसलिए की-जल्द ही इस गोरखधन्दे से अपना छुटकारा हो।

नकाब—तो क्या आप यहां आकर फँसे हुए हैं। नहीं नहीं ऐसा मत कहिए,-आप इतने खूबसूरत और साथही जबर्दस्त आदमी क्यों किसी के हाथ फँसेंगे? क्या आपने कोई बुरा स्वप्न तो नहीं देखा है?

कुमार—अब मैं समझ गया,-यह सब चालबाजी तुम्हारीही है। तुम जरूर महामाया की सखियों में से कोई एक हो।

नकाब—बाप रे बाप! आप क्या कह रहे हैं,—मैं महामाया की सखा हूँ? कहां महामाया की सखी,—कहाँ मैं,—

कहां जमीन कहां आशमान ? मालूम होता है, आपका दिमाग कुछ खप्त होगया है। अब मुझे डर लगने लगा। जरा दरवाजा तो खोल दीजिए। मैं अब यहां एक मिनट भी न रहूँगी।

कुमार—(उसके नकाब को उलटने के लिए हाथ बढ़ाकर) बस बस यह ढोंग तो मत दिखावो, मैं अब तुम्हारी सूरत देखे विना हर्गिज न छोड़ूँगा।

नकाब—एँ एँ ? आप यह क्या कर रहे हैं। अगर ऐसी ज़बर्दस्ती करने पर आमदा होंगे तो मैं गला फाड़कर चिल्ला उठूंगी।

कुमार—(उसका हाथ पकड़ कर) अच्छी बात है,—मैं भी यही चाहता हूँ। इतना कहकर उन्होने फूर्ति के साथ उसके नकाब को खींच कर दूर फेंक दिया। नकाब के अलग होतेही उन्होंने एक चांद से भी बढ़कर खूबसूरत मुखड़े को देखा,-जिसको देखतेही ये सकते की हालत में आगए। इनका दिल इनके हाथ से जाता रहा। उस औरत ने इनकी ऐसी अवस्था देख हँसकर कहा—देखिए मैं पहलेही से कहती ही थी, आपने मेरी बात कुछ भी न सुनी आखिर यही हालत होगई जो होने की थी। उसकी ऐसी बातें सुन कुमार ने बहुत कुछ अपने को सँभाला और धीरे से कहा—अब सच सच बतावो, तुम कौन हो ?

औरत—मैंने तो आपसे पहिलेही कह दिया था, मैं कोई नहीं हूँ. न मैं अपने को कुछ जानती ही हूँ।

कुमार—तुम झूठ बोल रही हो। बतावो, मेरे शरकी कसम बतावो, तुम कौन हो, वह जगह कौन है।

औरत—अच्छा तो बताती हूँ मगर इसके बदले आप मुझे क्या देंगे।

कुमार—तुम जो चाहोगी सो मैं दूँगा।

औरत—देखिए, यह जबान फीकी न होने पावे। अच्छा सुनिए,—मैं महारानी महामायाकी सखी अलकनन्दा हूँ। यह जगह तिलस्म के भीतर ही है। मैंनेही आपको उस दुष्टा के हाथ से छुड़ाया है।

कुमार—यह तुमने बहुतही अच्छा किया,—मगर ऐसी जगह पर लाकर क्यों मुझे रक्खा,—क्या तुम्हारे रहने का मकान यही है?

अलक—जी नहीं, मैंने आपको भुलावे में डालने के लिए यह सब काम किया था,—अब चलिए, मैं आपको अपने रहने की जगह दिखाकर हिफाजत के साथ रखती हूँ। इतना कहकर वह उठी। कुमार भी उसके साथही उठे। अलकनन्दा ने दरवाजे को खोला, सामने ही एक लम्बी सहन दिखाई पड़ी। दोनो एक साथही कमरे के बाहर निकल सहन के आखिरी हिस्से में आ, एक सीढी के रास्ते नीचे उतरे, सीढी के पासही एक बन्द दरवाजाथा, अलकनन्दा ने उसको खोलकर मोमबत्ती जलाई, उसकी रोशनी में कुमार ने दूरतक गई हुई एक लम्बी चौड़ी सुरंग देखी,—उसने इनका हाथ पकड़ा। वह आगे आगे कुमार पीछे पीछे उस सुरंग पर चलने लगे, लगभग आध घण्टे तक चलने के बाद फिर एक बन्द दरवाजा मिला। उसने उसको भी खोला। उसके खुलते ही भीतर की तेज रोशनी दिखलाई पड़ी। दोनो उसमें घुसे। उनके घुसतेही दरवाजा आपसे आप बन्द होगया। अन्दर कई एक खूबसूरत लौंड़ियां खड़ी हो इसी ओर देख रही थीं। अलकनन्दाने वहां पहुँच सबकी ओर देख कुछ इशारा किया जिससे वे सब एक एक करके कई ओर चलीं

गई। इसके बाद कुमार को ले कई एक सीढियों को चढ़कर एक निहायत ही सजे हुये कमरे में पहुँची। कुमार इतने बड़े महाराज के लड़के थे, उनको किसी बातकी कमी नहीं थी। उनका कमरा भी हरएक कीमती सामानों से सजा हुवा रहता था, मगर इस तरह से सजा हुवा कमरा उन्होंने बहुत ही कम देखा था। कुछ देर के लिये वे वहां पहुँच कर ताजुब में आ इधर उधर देखने लगे। उन्हे ऐसा करते देख अलकनन्दा ने हँसकर उन्हे एक कोंच पर बैठा, आपभी उन्ही की बगल में बैठ कहा—क्या आपने कभी इस तरहका कमरा नहीं देखा था?

कुमार—हाँ, करीब करीब ऐसी कीमती सामानों से सजा हुवा कमरा तो मेरे देखने में नहीं आया था।

अलक—यह तो बिल्कुल ही मामूली सामानों से सजा हुवा कमरा है। अगर आप बहुरानी का खास कमरा देखेंगे तो बहुतही ताजुब में आजायंगे।

कुमार—इस तिलस्म में बड़ी ही दौलत मालूम पड़ती है।

अलक—यह मामूली तिलस्म तो है नहीं, हीरे का तिलस्म है। इसके मालिक भी और कोई नहीं अन्त को आपही हैं। यहां एक एक मामूली सी लौंडी के पास भी लाखों का सामान पड़ा रहता है।

कुमार—यह सब लक्ष्मी की दया है। वे जो चाहे सो कर सकती हैं। मैं तो तुम्हारे इस कमरे के सामानोंही को देख तमाम दुनियां की दौलत का अटकल लगा रहा हूँ।

अलक-कल रात को मैं बहुरानी का कमरा दिखाने के लिए आपको ले चलूंगी।

कुमार-मुझे किस तरह ले चलोगी। अगर मुझे कोई पहचान जायगा तो,—कभी जीता छोड़ देगा ?

अलक--नहीं नहीं, आपको कोई भी पहचान नहीं पावेगा। मैं आपको औरत बनाकर ले चलूंगी।

कुमार-मुझे औरत बनाकर ले चलोगी ? कोई सुनेंगे तो क्या कहेंगे।

अलक—(हँसकर) कुछ नहीं-यही कहेंगे,-औरत के कमरे में औरत बनकर गए,-मर्दका कमरा होता तो मर्दही होकर जाते।

कुमार-(हँसकर) तो क्या औरत के कमरे में जितने मर्द जाते हैं सब औरत ही बनकर जाते हैं।

अलक-- जोर से हँसकर) नहीं नहीं-ऐसा तो नहीं होता मगर--वक्त में सब कुछ करना पड़ता है। मैं लुकें छिपे से भी आपको उनका कमरा दिखा सकती हूँ। परन्तु इसमें उसकी तरह मजा नहीं आवेगा।

कुमार-खैर तुम जैसा कहोगी वैसाही करेंगे,-मगर मैं अपने साथ छिपाकर तलवार भी लेता जाऊँगा।

अलक--छीः औरत के सामने तलवार लेते जाने में आपको शरम नहीं मालूम पड़ेगी। क्या आप औरत की जात से भी डरते हैं ?

कुमार--नहीं,-मैं औरत की जात से क्यों डरूँगा मगर यहां की औरतें मर्दोंका कान काटती हैं, इसीलिए मैंने तरवार का नाम लिया था,-अगर हथियार अपने पास रहे तो कोई भी खतरा क्यों न हो, मैं तुम्हे और अपने को बचालूँगा।

अलक---अच्छी बात है,-आपकी कमर में मैं सब से बढिया तिलस्मी तलवार भी छिपाकर बांध दूँगी। अच्छा-अब

आप दूसरी कोठरी में चलकर आराम कीजिए । इतना कहकर उसने पासही के एक टेबुल परका एक बटन दबाया, जिससे पीछे की ओर का एक दरवाजा हल्की आवाज देता हुवा खुल गया । कुमार उठ खड़े हुए,--अलकनन्दा भी उनके साथही उठी । दोनो उसी दरवाजे से होते हुए अन्दर घुसे । उनदोनों के आतेही दरवाजा भी बन्द होगया। यह कमरा उस कमरे से बहुतही छोटा था, मगर कीमती सामानो में उससे भी बढ-चढ कर था । दोनो ओर दो मशहरी लगी हुई थी । रोशनी से कमरा जगमगा रहा था। अकलनन्दा ने कुमार को एक टेबुल के पास लेजाकर अङ्गुर,दाख, अनार, सेव खाने के लिए कहा । उन्हे इस समय भूख नहीं थी,--तब भी उसकी जिद से उन्होने कुछ खालिया । इसके बाद उसने एक मशहरी के पास लेजाकर उन्हें सोने को कहा । कुमार बेहोश होकर होशमें आए थे । उनकी आंखों में नींद भरी हुई थी। वे बिछौने पर लेटतेही सो गए । दूसरे दिन सुबह आठ बजेके बाद उनकी नींद खुली । देखा, अलकनन्दा उन्हीं के पैताने की ओर बैठी हुई पंखा कर रही है । कुमार ने कुछ ताज्जुब में आकर उसकी ओर देखा । उन्हे ऐसा करते देख उसने कहा--नहीं, आप इसतरह मेरी ओर मत देखिए,-मैं रात भर जागी भी नहीं हूँ, न आप के साथ सोई ही हूँ ।

कुमार – नहीं नहीं, मेरे कहने का मतलब यह नहीं है। तुम्हें मेरे ऊपर इतनी मुहब्बत क्यों है ?

अलक – मैं ही क्यों, आप को तमाम तिलस्म की परियां मुहब्बत की नजर से देखा करती हैं । जहां आप जायगे इसी तरह की सेवा में सब लगी रहेंगी । कोई भी आपसे नफ़रत करने का विचार तक नहीं करेंगी ।

कुमार—यह क्यों, क्या मुझमें औरों से बढ़कर कोई वि- चित्र बात है।

अलक—विचित्र तो नहीं मगर दिल लुभानेवाली बात तो जरूर है।

कुमार—क्या महामाया भी मुझको तुम्हारी ही तरह प्यार करती है।

अलक—मुझ से भी बढकर, अगर वे आपको पावेंगी तो एक मिनट भी अपने पास से अलग न करेंगी। वे भी जी जान से आपके ऊपर आशक हैं। उनके कई एक खूफिए आपको खोजने के लिए तिलस्म के अन्दर छितरे हुए हैं।

कुमार-तो क्यों न तुम मुझे इसी तरह उनका सामना करा देती हो?

अलक—(आंखों में आंसू भरकर) क्या आप मुझे जलाकर छोड़ा चाहते हैं। फिर मैं आपसे जिन्दगीभर मिल न सकूंगी

कुमार—भला मैं,—किसी की विवाहिता औरत को क्यों रक्खूँगा। बहुरानी के तो महाराज हैं न?

अलक—हां हैं तो,-मगर वे उनकी जरा भी परवाह नहीं करती हैं। उनको तो अपने आनन्द से मतलब है। पाप धर्म का आजतक न उन्होंने विचार ही किया न विचार ही करेंगी।

कुमार-छीः छीः मैं किसी ऐसी औरत से मुहब्बत ही नहीं करता। अच्छा यह तो बतावो,-तुम कुंआरी हो?

अलक—जीहां,—सिवाय आपको छोड़ कर आज तक मेरे दिल ने स्वप्न में भी किसी को अपना समझा नहीं है।

कुमार-यह बड़ी खुशी की बात तुमने सुनाई। नहीं तो

इसके लिए मुझे बहुतही पछताना पड़ता । अच्छा यह तो बतावो,-तुम कुमारी सावित्री के नाम को जानती हो ।

अलक—मैं नाम ही से क्या, आदमी तक को जानती पहचानती हूँ ।

कुमार-यह तुम कैसे जानती हो ? उसको तो तुमने कभी देखा न होगा । वह तो यहां की रहने वाली नहीं है ।

अलक—इससे क्या, इन दिनों तो वह यहीं है ।

कुमार-यहीं है ? तब क्या तुम उससे मेरी भेंट करा सकती हो ?

अलक—हां करा सकती हूँ, मगर दो एक रोज़ के भीतर नहीं, पांच सात रोज़ के भीतर उसे खुद यहीं लाकर भेंट करा दूँगी ।

कुमार—अगर ऐसा करोगी तो तुम्हारा जन्म भर एहसान मानूँगी ।

अलक—(हँसकर) बस फ़क़त एहसान ही भर मानेंगे या और भी कुछ करेंगे ?

कुमार—वह तो मैंने पहिले ही तुमसे ज़बान हार दी है । जो तुम कहोगी सो सब मैं करूंगा । मगर सावित्री की शादी होने के बाद ।

अलक—हां हां, उसकी शादी हो लेने के बाद । अच्छा, अब उठिए, नित्य कृत्य से निवृत्त होकर भोजन कर लीजिए तब बैठकर गप शप लड़ाते रहेंगे । कुमार भी यही चाहते थे । घण्टे भरके बाद सब कामों से निपट कर भोजन किया । इसके बाद दोनों आदमी बैठकर हंसी दिल्लगी की बातें कर रहे थे, इतने में एक ओर का दरवाज़ा तेज़ी के साथ खुला और उसमें से एक लौंडी ने निकल घबड़ाई हुई आवाज़ में

अलकनन्दाकी तरफ़ देखकर कहा-"महारानी आपकी तलाश-में आरही हैं। कुमार का किसी हिफ़ाज़त की जगह में छिपा-कर उनसे शीघ्र मिलिए। आज कुछ लक्षण औरही मालूम पड़ता है"। यह सुनतेही अलकनन्दा के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगी। उसने शीघ्रही कुमार का हाथ पकड़ बग़ल की दीवार के पास ले जाकर,-किसी कीलको दवा, राह पैदा किया। इतने में एक दूसरी लौंड़ी ने आकर महारानी के आ-पहुँचने की सूचना दी, अलकनन्दाने जल्दी जल्दी में कुछ समझाकर उन्हे उसके भीतर कर दिया। उनके भीतर जाते-ही वह दीवार फिर ज्यों की त्यों बरोबर हो गई.-साथ ही कई एक सखियों को लेकर महारानी महामाया भी घड़घड़ाते हुए उस कमरे में आपहुंची। उसने आतेही सब से पहले अलक-नन्दा को पकड़ने का हुक्म दिया। वह बेचारी बेवश हो पकड़ी जाकर महारानी की तरफ करुणा भरी आंखों से देखने लगी।

पन्द्रहवाँ बयान।

" तुम जहाँ उमड़े वहां ही गिर पड़े. कुछ शक नहीं।
हो खड़े चलना न छिनभर भी, बने जब तक नहीं ॥"
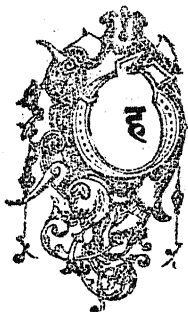
मारे साथके पढ़ने, सुनने, चलनेवाले जितने मेहरबान हैं वे सब अब तक-हमारी उठती हुई तरंगों में-हमारी ही तरह गोता लगाते हुए कई तरह के विचारों में पड़े हुए होंगे। उन्हे इस हीरेके तिलस्म की महारानियों का हाल, एक अजबही तरह का मालूम पड़ता होगा। मगर नहीं-बिखरी हुई बातों को समेट कर दिखाने का मौका इस समय नहीं है, न उस तरह दिखलाने में कुछ आनन्दही आ सकता है। जिस तरह हम अपने बिचार की गुड्डीको बढ़ा रहेहैं, उसी तरह आप लोग भी बढ़ते हुए जाइए। जिस समय वह किसी को काटकर अपनी बाजी बनालेगी उस समय देखने, पढने, सुनने वाले को भी अवश्यही दूना आनन्द आवेगा। सम्भलपुर से लेकर कटकतक भीतरही भीतर हीरे-का तिलस्म बँधा हुवा है। दोनो तरफ आने जाने की दो राह बनी हुई है। एक राहमें कटक है, एक राहमें सम्भलपुर है।

बीच बीच में तिलस्मके भीतर घुसने की कई एक राहतोहैं, मगर बड़े ही खतरे की राहें हैं। सिवाय वहां की महारानी और दारोगा को छोड़ उन सब राहों से कोई आजा नहीं सकता। हां इनदिनों दोनों महारानियों की ऐयाशी से उनकी कई एक सखियां भी उन सब राहों को जान गई हैं। यह तिलस्म छोटे मोटे कई एक तिलस्मों से घिरा हुवा-दोनों शहरों के बीचोबीच बड़ी मजबूती के साथ-खर्वों, शंखों से भी बढ़कर दौलत को लेकर अचल हो पड़ा हुवा है। इसके अन्दर हजारों तरह की ताज्जुबदेह चीजें भरी हुई हैं। इसमें बड़े बड़े कीमती सामान हैं। हीरा, लाल, पन्ना, मोती, मूँगे तो अनगिन्ती हैं। सोने चाँदी की तो दीवारें लगी हुई हैं। हजारों झाड़ फानूस की तरह अकेला रोशनी देनेवाला एक बहुत बड़ा चमकीला हीरा एक खतरे की जगह पर हिफाजत के साथ रक्खा गया है। खासकर इसीके लिए यह तिलस्म भी बँधा हुवा है। संभलपुर और कटक की महारानियाँ इसीके रक्षक बनकर रहते हैं।

इन दोनों से पहले यहां,-मर्दही राज करते थे,—परन्तु अद्भुतनाथ और हजारी बागके नव्वाब नसीरुद्दीनकी कारस्तानी से ये दोनो अब यहाँ इसतरह राज कररही हैं। इन्होने कैसे इस राजको लिया, उन दोनों ने कैसे इन दोनों को इन राज्यों में बैठाया, वह सब बातें पीछे मालूम होती जायगी। ये तीनों बहोनें एकही माकी लड़की हैं,-मा मर गई,—बाप का कई बरसों से पता नहीं है। अद्भुतनाथ से इन तीनों की बड़ी दोस्ती थी, उसीके जरिए से इनकी पहुँच यहां तक हुई। अद्भुतनाथ ही ने स्वामी अच्युतानन्दको इन तीनों से मि-

लाया। वह बड़ाही खूबसूरत आदमी था, उसे देखकर ये तीनों बहीने लट्टू होगईं। अन्तको बडी बडी बातें हुई,-बड़े बड़े आदमी दफन कर दिएगए। सम्भलपुरके महाराज बलदेव-सिंह, उनकी महारानी वागेश्वरी, और उनकी छोटी सी लड़की नलिनी को कहीं तिलस्म में ही कैदकर मायादेवी और उसकी छोटी बहन कुमुदिनी ने उस राज्य को अपने कब्जे में कर लिया। इसके पहले ही बहुरानी महामाया ने कटक के महाराज श्यामसुन्दरसिंह, उनकी महारानी रत्नेश्वरी और उनकी भी एक नन्हीसी लड़की पद्मिनी को किसी तिलस्मही-की अनजान जगह में लेजाकर छिपाने के बाद उसको अपने कब्जे में कर लिया था। इस तिलस्मके शुभचिन्तक, सब बातों के ज्ञाता, दारोगा इन्द्रदेव के चाचा, वृद्ध दारोगा अच्युतानन्द भी अपनी औरत और लड़को के साथ यहीं कहीं मजबूरीकी हालत में पड़े पड़े अपना बुरा दिन काट रहे हैं। इन्हीं की जगह पर वंशीधर-अपना नाम अच्युतानन्दही रख तिलस्मका दारोगा बनके दोनों महारानियोंकी तबीअत भरता हुवा आता था, परन्तु इनदिनों किसी खास बातके आपड़ने से वह विशेष तिलस्म में आता जाता नहीं है। मालती एक बड़ीहो धूर्त्ता और मायादेवी की परम प्रिय सखी थी, उसने अपनी चालाकी से तीनों बहीनों को अपने हाथमें कर, अपने पतिको तिलस्म के दारोग की जगह पर बियत करलिया था।

माहामाया के दिखौवा एक पति थे। उनका नाम विहारी-सिंह था। वे उसके हाथका खिलौना होकर जो वह कहती-थी उसी को शर झुकाकर किया करते थे। मायादेवी और कुमुदिनी की अभी तक शादी नहीं हुई थी। वे विशेष कर

शादी की परवाह भी नहीं करती थी। इन तीनों बहिनों की चालचलन करीब करीब एकसी थी। इन तीनों की जितनी सखी दोस्त थीं वे सब भी इसी तरह की थीं। माहामायाकी बाह सखियां थीं। मायादेवी की भी बाहही सखियां था। कुमुदिनी की भी करीब करीब उतनीही सखियां थीं। ये सब अपनी मालिकनी को खुश करने के लिए इधर उधर घूम फिर कर खूबसूरत खूबसूरत नौजवानों को ला,-उनसे अपनी भी साध पूरा कर उनके पास पहुँचा दिया करती थी। तिलस्मके भीतर दौलत की कमी नहीं थी इसलिए इन तीनों की सखियों के पास करोड़ों की दौलत थीं। उन सब सखियों में हरएक के पास पचास साठ लौड़ियाँ भी रहती थीं। महामाया के दरबार में हजारों लौंड़ियां काम करती थीं। मायादेवी और कुमुदिनी के यहां भी हजारों लौंड़ियां रहती थीं। सब सखियोंके लिए अलग अलग महल दिया गया था। सभी खुशी से अपना समय गुजारती थीं। मायादेवीसे विशेष महामायाका हुक्म सबकेऊपर चलता था। उससे सभी डरते थे, वह लिस्म की बहुत सी बातें भी जानती थी—,सबसे बढकर उसके पास तिलस्म की कुञ्जी ही थी, वह तिलस्म के भीतर जो चाहे सो कर सकती थीं। उतनी शक्ति मायादेवी की नहीं थीं, वह तिलस्म की हालात से तो बहुत कुछ जानकारी रखती थीं मगर बहुरानी की तरह उसके पास तिलस्म में जहां चाहे वहां जाने का हथियार नहीं था। कुमुदिनी भी तिलस्मी बातों में बहुत कुछ अपने को लगाती थी। उसकी मुहब्बत विशेष कर मायादेवी के ऊपर थी, इसलिए वह कटक में न रहकर संभलपुर में ही रहती थी। उसका महल कटक में भी था।

इस समय महामायाकी उमर पचीस वरस की थी, माया-देवी का बाइसवाँ साल था,—कुमुदिनी ने अभी अठारहही वरस में पांव रक्खा था। इन तीनों का एक ब्रजकिशोर नाम का भाई भी था, मगर इनलोगों की चालचलन से वह सख्त नाराज था, इसलिए इतनी बड़ी हुकूमत में अपनी बहिनों को रहते हुए देख कर भी इनलोगों के साथ न रह कर वह कहीं चल दिया था। कटक में कई एक ऐयार भी थे, उसी तरह संभलपुर में भी कई एक ऐयार थे। दोनों राज्यों के बीच में तिलस्म के भीतर ही भीतर खबर पहुँचने वाला तार भी लगा हुआथा। कई एक कल पुर्जों से चलने वाली गाड़ियां भी थी। दोनों ओर के आदमी अगर चाहे तो पन्द्रही मिनट के भीतर इधर उधर कर सकते थे। मगर महारानियोंके खास आदमियों के अलावे और कोई खबर भी नहीं भेज सकता था, गाड़ियों में भी सवार होने नहीं पाता था। तिलस्म के अन्दर बड़ी बड़ी इमारतें बनी हुई थीं। दोनों शहर बड़ी ही खूबसूरती से बसा हुआथा। उस समब के देखने वाले उन दिनों भारतबर्षमें उन दोनों शहरों को ही अद्वितीय मानते थे। वहां की प्रजा भी बड़ीही धनी थीं। गरीबीको लोग बहुत कम जानते थे। दोनों ओर कई लाख तैय्यारी फ़ौज हर वक्त अपनी अपनी जगहपर मुश्तैद होकर रहती थी। महामाया का दबदबा बहुत ही चढ़ा बढ़ा था। वह जिससे बिगड़ती थी उस राज्य को तिलस्मके जोर से मटियामेट कर देती थी। तीनों बहन में प्रेमका बर्ताव था। महामाया कुमुदिनी को बहुत ही प्यार करती थी, हफ्ते में एक मर्तब अगर वह न मिलती तो वह खुद मिलने के लिए आती थी। कुमु-

दिनी उसको उतना नहीं चाहती थी। उसकी मुहब्बत माया-देवी से थी, परन्तु मायादेवी उसको उतना प्यार नहीं करती थी। अच्युतानन्द तीनों को मानता था,—तीनों से उसका गहरा लगाव था। नव्बाब नशीरुद्दीन भी बराबर आया जाया करता था। अद्भुतनाथ भी आता जाता था,—परन्तु इधर वह साल डेढ़ साल से बिल्कुल ही नहीं आता था। अम्बालिका, भुवनेश्वरी, राजेश्वरी, जेबुन्निशा और हुस्नबानू से भी इन लोगों की बड़ी दोस्ती थी। वे सब भी इस तिलस्म के अन्दर आया जाया करती थी। जेबुन्निसा और हुस्नबानू से तो बड़ी ही घनिष्ठता थी। इसके आगे हमारे साथ के चलने वाले धीरे धीरे सब कुछ रहस्यों को जान जायंगे। इस समय मैं एक मजेदार बातों के पीछे अपने साथही अपने प्रेमियों को भी ले चलना चाहता हूँ।

महामाया के पति बिहारीसिंह बालासोर के महाराज थे। उनकी उमर इस समय छव्वीस सत्ताइस बरसकी थी। यह खूबसूरती में अपनी शानी नहीं रखते थे,-मगर कुछ शराबी थे। शराब इनको बड़ीही प्रिय थी। बिना शराब के इनको एक मिनट भी भारी मालूम पड़ता था। इनकी खूबसूरती ही में लट्टू होकर महामाया ने उस राज्यको अपने कब्जे में कर इन्हे अपना पति बनाया था। यह महामाया को नहीं चाहते थे, इनका दिल एक दूसरे ही के ऊपर मायल था। तीनों बहिन इनको मुहब्बत की नजरसे देखती थीं,-तीनों से इनका सम्बन्धभी था। यह कुछ दिल्लगीबाज भी थे। हमेशा इनको हँसना बोलना पड़ता था। इनके लिए एक बहुतही सुफियाने ढंगका अलग महल बना दिया गया था। यह अक्सर करके

वहीं रहते थे। इनकी तबीअत उसी में लगती थी। महामाया-को जब उनकी जरूरत पड़ती थी तब उन्हे बुला लेती थी। इस समय वे अपने महलही में है। उनका सजासजाया कमरा रोशनी से जगमगा रहा है। वे अकेले नहीं हैं, उनके पास एक खूबसूरत औरत भी बैठी हुई है। दोनो नशे में चूर हैं। दोनों मखमली गद्दे पर आमने सामने बैठे हँसी दिल्लगी की बातें कर रहे हैं। बातें करते करते उस सुन्दरी ने बिहारीसिंहके मुंहमें चुटकी भरकर कहा – बस मेरे राजा! अबतो तुम्हारे में वह ताव बिल्कुल ही न रहा होगा।

बिहारी—क्यों नहीं मेरी रानी! मैं कभी ताव से खालीही नहीं रहता।

सुन्दरी—अगर तुममें ताव होता तो-आजदिन अपना राज रहतेहुए भी किसीके नौकर बनकर रहते। देखो—तुम्हारी नाम मात्र की औरत महामाया किस नजर से देखती है और तुम जानते हो, वह किस किस से मुहब्बत रखती है। किस किस को चाहती है। मैं देखती हूँ—वह मर्दकी तरह है, तुम औरत की तरह हो। वह अपने ऐशमें तुम्हे कुत्तेकी तरह पूछती भी नहीं है।

बिहारी-और मैं भी जानती हो,-उसे कुतिया की तरह भी पूछता नहीं हूँ। वह अपने ऐशमें मेरी याद नहीं करती है तो मैं भी—अपने ऐश में उसे याद नहीं करता। कोई किसी में मश्त है कोई किसी में मश्त है। मगर एक बात तो तुमने ठीक कहा। मैं उतने बड़े रियासत का राजा होकर भी इस ससुरी का नौकर होकर रहता हूँ।

सुन्दरी—यही तो मेरी आँखों में सबसे ज्यादा खटकताहे।

बिहारी—तुम्हारी आंखों को ही खटकने से क्या होता है, अगर मेरी तकदीर को भी खटके तो कामचले। अच्छा मोहनी, मेरी प्यारी मोहनी ! मेरी दिलरुवा मोहनी ! तुम तो मेरी मुहब्बत, मेरी आदत, मेरी बातों से अच्छी तरह वाकिफ हो। तुम्हारी मुहब्बत भी मेरे ऊपर कम नहीं है। तुम जीजान से मुझे चाहती भी हो। बतलावो—मैं किसतरह,—अपनी प्यारी कमलिनी के साथ तुम्हे लेकर अपने राज्य में चला जा सकूँगा। किस तरह इस महामाया का पिण्ड छूटेगा ?

मोहनी-कमलिनी के साथ मुझे,—क्या अभी तक कमलिनी की मुहब्बत तुम्हे लगी ही हुई है।

बिहारी-बस प्यारी ! मुझसे उसकी मुहब्बत छोड़ी नहीं जाती। मुझे उसके साथ मुहब्बत करने दो। तुम दोनों आपस में एक प्राण दो देह हो जावो। मुझे न सतावो। मुझे न रुलावो। मुझे पछताये की आगमें मत जलावो। मैं तुम दोनों को बराबर चाहूँगा।

मोहनी—नहीं—मैं सौतको फूटी आँखों से भी देखा नहीं चाहती। तुम उसकी मुहब्बतको छोड़दो, उससे बिलकूलही वास्ता तोड़दो।

बिहारी- (उसका पाँव पकड़कर) मैं हाथ जोड़ता हूँ, देखो,-मेरे ऊपर दया करो,-मुझे उसकी मुहब्बत छोड़ने के लिए कहकर मार मतड़ालो। मैं मर जाऊँगा। उसी दम मर जाऊँगा।

मोहनी-तुम क्यों मरोगे। मैं तुम्हे कब मरने दूँगी। मगर नहीं,—वह हरामजादी मुझे फूटी आंखों से भी नहीं देखती है तो मैं उसे क्यों सौत बनने के लिए जगह दूँगी।

विहारी—नहीं नहीं, प्यारी मोहनी ! नहीं,—तुम बिलकूल भूल में हो। वह तुम्हे चाहती है,-वह तुम से मुहब्बत रखती है। वह बार बार तुम्हारी ही याद किया करती है। तुम उसकी निस्बत में ऐसी ज़बान मत निकालो।

मोहनी—इसका सबूत क्या है ?

बिहारी—सबूत,-सबूत मैं तुम्हे तुम्हारी आंखों के सामने प्रत्यक्ष करके दिखा दूँगा।

मोहनी-अगर न दिखासके तो देखना, होशियार रहना-मैं यह राज़ महामाया से एक एक जाकर कह दूँगी।

बिहारी-तब तो यह सब करने के पहले मुझे जहर ही खिलाकर क्यों नहीं मार डालती। न रहे बाँस न बाजे बांसुरी।

मोहनी-क्या इससे उसका बदला चुक जायगा। नहीं हर्गिज नहीं, इससे तो मुझे भी पछताना पड़ेगा। मैं तो सिर्फ तुम्हे बहुरानी से झिडकियां खिलाकर-उनकी उस मुँहलगी हरामज़ादी कमलिनी को तिलस्म के बाहर किया चाहती हूँ। अगर तुम्हारी बातें झूटी निकली और मैं यह सब कर सकी, नहीं नहीं करूंगी तो महामाया भी मुझे सब सखियों से ज्यादा प्यार करने लग जायगी।

बिहारी-(हाथ जोडकर) मैं हाथ जोड़ता हूँ, पांव पड़ता हूँ, देखो-इधर देखो,-रूठो मत,-गुस्से में अपने मिज़ाज को गरम मत करो,-मैं तुम्हे-जानसे, शरीरसे, मनसे, सभी बातों से प्यार करूँगा। जो कहोगी करने से बाज न आउँगा, मगर मेरी-फ़कत मेरी एक ज़रासी बात को सुनलो।

मोहनी—(हँसकर) तुम क्षत्रिय होकर इतना डरते क्यों हो। इसीदम तो मैं जाकर महामाया के कान में इन सब

बातों की भनक न दे आऊंगी। मेरे कहने का मतलब यह था, अगर वह होगा तो यह भी होगा। वह न होगा तो यह भी न होगा,-खैर इस समय इन सब बातों में क्या रक्खा है, इसको छोड़ो। तुम आज बहुरानी के पास गए हो या नहीं?

बिहारी—क्यों क्यों, आज तो मैं नहीं गया हूँ। क्या वह कुछ कहती थी?

मोहनी—तुम फिर भी डर गए,-अजी जनाब राजा साहब! तुम मर्द होकर क्यों औरतों से भी बदतर हुए जाते हो। तुम में ज़रा भी दम नहीं है?

बिहारी—दम तो है मगर-सच कहता हूँ,-बहुत ही कम है।

मोहनी—तो क्या तुम अपने दम को अब ज्यादा बनाकर रखना नहीं चाहते हो?

बिहारी—क्यों नहीं चाहता मगर रक्खें किस तरह,-यह ससुरी तो मुझमें ताव लाने का मौक़ाही नहीं देती है।

मोहनी—अच्छा सुनो, कुछ देर के लिए तुम मर्द बनकर मेरी बातों को ध्यान में लावो,-मैं तुम्हें ताव आने का अच्छा ढंग बताती हूँ। तुम इस समय बहुरानी के पास चले जावो।

बिहारी—अरे अरे! क्या तुम मुझे लात घूँसा खिलाया चाहती हो। क्या ऐसे सयम तुम्हें यही करने का धर्म है?

मोहनी—नहीं नहीं, तुम्हारी तो नाहक ही धोती ढीली पड़ जाया करती है। क्या ऐसे समय वहां जातेही लात घूंसे से तुम्हारी पूजा हो जाया करती है?

बिहारी—नहीं तो और क्या, तुम जान बूझकर मुझे आग में कूदने को कहती हो?

मोहनी—तुम्हारी अक्ल तो तुम्हारे साथ हैनहीं,—मैं क्या कहूँ। तुम जरा अक्ल को अपने पास बुलाकर काम लिया करो। तुम्हारी जगह मैं होती तो आज तक बहुरानो को अपनी लौंडी बनाकर इस तिलस्म का मजा अकेले मैंही उठाती। मैंने नाहक तुमसे मुहब्बत की। नामर्द की जोरू होने से बेहतर मर्द की लौंडी हा बनकर रहना है।

बिहारी—नहीं नहीं तुम ऐसा मत कहो,-मैं मर्द हूँ,-मर्द-ही बन कर रहूँगा। तुमने मेरे साथ मुहब्बत किया तो कुछ बे-जा नहीं किया। देखना,—मैं भी तुम्हे अपनी मर्दानगी दिखा-कर खुश करूँगा।

मोहनी - खुश करोगे? तब तो बड़ी खुशी की बात है। अच्छा अब डर को तो रख दो ताक में,—तुम सीधे चले जावो बहुरानी के पास।

बिहारो—(बात काट कर) बस बस, यही तो तुम बेजा कहती हो।

मोहनी—तुम आखीर तक मेरी बातें सुनते जाते हो या बीचही में कूद पड़ते हो। डरोमत,--डरने से काम नहीं चलता। वह भी तो तुम से मुहब्बत रखती है। उसको भी तो तुम्हारो जरूरत पड़ती है। वह भी तो तुम्हारी बगल गरम करती है।

बिहारी—जब करती थी तब करती थी, अब तोउसे रण-धीरसिंह के इश्कने बावली सी बना रक्खा है। इधर हफ्तों-से मेरी बुलाहट भी नहीं है,—न मुझसे उसने हँसकरही बोला है। जब कभो जाता हूँ तो बड़ी उदासी के साथ बातें करती है,—जहां तक होसकता है मुझे जल्दही अपने पास से हटाने की फ़िक्रमें लगती है।

मोहनी—अच्छा तो तुम इस समय एक काम करो।

बिहारी—एक छोड़ दश काम कहो करें,—करके दिखावें मगर उस हरामज़ादी के पास न जायंगे—मुझे उधर भेजनेका नाम भी न लो।

मोहनी—खैर यही सही मैं तुम्हे उसके पास न भेजूँगी। मगर वह यहां आजाय तो उससे मुलाकात कर कुछ अपना मतलब साध सकते हो?

बिहारी—उससे मतलब साधना! वह महा चालाक है। उससे मतलब सधही नहीं सकता।

मोहिनी—सधेगा क्यों नहीं, बड़े बड़े से मतलब सध सकता है, वह हैही क्या चीज़?

बिमारी—अच्छा बतावो, तुम इस समय उससे क्या मतलब साधा चाहती हो?

मोहनी—इस हीरे के तिलस्म की एक कुञ्जी है,—उस कुञ्जी को वह एक ऐसी जगह लेजाकर रक्खी है, जहाँ बिना कुञ्जी के कोई जाही नहीं सकता। उसकी कुञ्जी वह तावीज़ बनाकर अपने गले में पहनी रहती है। अगर उस तावीज़ को तुम किसीतरह उसके गले से निकाल सको तो, फिर तुम,—तुमही होजावोगे,—मैं मैंही होजाऊँगी। महामाया हमलोगोंकी लौंड़ी बनकर हाथ जोड़ा करेगी। वह इस तरह इस तिलस्म में अपना दबदबा उसी के बल पर दिखा रही है। यहां के दारोगा भी उसी से उसे मानते हैं।

बिहारी—क्या मायादेवी के पास भी ऐसी ही कुञ्जी है?

मोहनी—नहीं, वह तिलस्मकी हालात तो बहुत कुछ जानती है। मगर यही एक हथियार उसके पास नहीं है।

बिहारी—केवल कुञ्जी ही को पाकर तुम क्या करोगी?

मोहनी—क्या करूँगी, कुञ्जी तो मेरे हाथ में दो,—फिर मैं जो कुछ करूंगी तुम्हे दिखाही दूँगी।

बिहारी—अच्छी बात है,—मैं उसको उसके गले से उतार लूंगा—मगर अफसोस! इन दिनों वह मेरे साथ बहुत कम सोती है,—नहीं नहीं सोती ही नहीं है। अगर तुमने इस की भनक कुछ दिनों पहले मेरे कान में डाली होती तो आज तक हमलोग तिलस्म के मालिक होकर उसको यहाँ से निकाल बाहर कर चुके होते। परन्तु यह तो बतावो,—वह इस समय मेरे पास कैसे आवेगी?

मोहनी—आवेगी, जरूर आवेगी। तुम बीमारी का बहाना करके हाथ पैर पटकते रहो। मैं तुम्हारी किसी लौंड़ी के ज़रिए उसके पास यह ख़बर पहुँचा देती हूँ। वह लाख हो,—अब भी तुम से मुहब्बत करती है। खबर सुनतेही चली आवेगी। उसके आने के बाद उससे लिपट कर तुम रोना, कलपना, और कहना-अब मैं न बचूंगा, तुम मुझे मत छोड़ो,-तुम रहोगी तो मुझे कुछ शान्ति होगी। फिर बातों ही बातोंमें आखिरी विदाई कहकर उसको अपने हाथसेभी शराब पिलाना,-उसके हाथ से भी शराब पीना। इसके बाद बड़ी मुहब्बत से उसे अपने पास लेटाना। समझे,—शराबका बाजार ठण्डा न पड़ने पावे। वह उसके नशे में बदहोश हो जाय। इसके जवाब में बिहारीसिंह कुछ कहाही चाहते थे, इतने में दीवार के पास कुछ खटका हुआ, साथही एक दरवाजा पैदा होकर लाल चादर से अपने तमाम बदन को छिपाए हुए एक नाटे कदका आदमी उसमें से निकल आया। उसे देख यह दोनों चौंक उठे

वह धीरे धीरे इन दोनों के करीब आकर खड़ा हुआ। बिहारी-सिंह डरके मारे बेत की तरह काँपने लगा। मोहनी उठ खड़ी हुई। उस सुर्खपोशने—लापरवाही के साथ अपने ऊपर की लाल चादर हटा दी,—उसके हटतेही उसके अन्दर से जिस की सूरत निकल आई,—उसको देख मोहनी के चेहरे पर हवा-इयां उडने लगी। बिहारीसिंह के मुँहसे एक गहरी चीख निकल पड़ी। मोहनी में संभलने की ताकत न रही,—वह थर थर कांपती हुई गश्त खाकर लम्बी हो गई।

॥ इति तृतीयभाग समाप्त ॥

नामक ऐयारी और तिलिस्मी विषय के उपन्यास के एक चित्र का नमूना।

मूल्य २)